सीक्रेट्स ऑफ सक्सेस

जीत और सफलता की आदत डालें

प्रदीप ठाकुर

सीक्रेट्स ऑफ सक्सेस

(जीत और सफलता की आदत डालें)

प्रदीप ठाकुर

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

भूमिका

हर व्यक्ति सफल होना चाहता है, यह उसका प्राकृतिक गुण या स्वभाव है। मनुष्य की जीव वैज्ञानिक संरचना ही ऐसी है, जो उसे कठिन परिश्रम करने और उपलब्धियों या सफलताओं के आनंद के लिए प्रेरित करती है। फिर भी अधिकतर लोग सफल क्यों नहीं हो पाते? वे अपने प्राकृतिक गुणों का उपयोग क्यों नहीं कर पाते? वास्तव में सफलता की स्वाभाविक इच्छा रखनेवाले अधिकतर लोगों की समस्या यह नहीं है कि वे सफल नहीं हो सकते, बल्कि उनकी सफलता की राह की सबसे बड़ी व आम बाधा यह है कि वे सफलता का सही अर्थ ही नहीं निकाल पाते। वे समझ ही नहीं पाते कि वास्तव में सफलता है क्या?

जब सफलता को परिभाषित करने के लिए कहा जाता है तो अधिकतर लोगों की सफलता के पारंपरिक विचारों का हवाला देते हैं, जैसे कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता या प्रसिद्धि हासिल करना, सत्ता की स्थिति को प्राप्त करना या फिर धन इकट्ठा करना। अधिकतर लोग इनमें से ही कोई एक जैसा बनने का सपना देखते हैं, उनकी नकल करने की कोशिश भी करते हैं। फिर भी उनके जैसा बन पाने में सफल नहीं हो पाते। क्योंकि वे सफलता का अर्थ ही नहीं समझ पाते हैं, इसीलिए दूसरों की नकल मारते हैं और इस भटकन में अपनी वास्तविक सफलता अवसर भी गँवा देते हैं। वे हमेशा मनमोहक लक्ष्यों के पीछे ही भागते रहते हैं, लेकिन कभी अपने भीतर झाँकने की कोशिश नहीं करते कि किस कार्य में उन्हें सही मायने में खुशी व परिपूर्णता महसूस होती है।

याद रखें कि प्रकृति ने हम सभी को अद्वितीय स्वरूप प्रदान किया है। इसीलिए हम व्यक्ति विशेष माने व कहे जाते हैं। अर्थात् भले ही हमने एक ही माता-पिता से जन्म लिया हो, लेकिन हर व्यक्ति विशेष है, दूसरों के बिल्कुल अलग। इसीलिए किसी भी दो व्यक्तियों के चित्र एक जैसे नहीं हो सकते। आपको अपना चित्र बनाना है। अर्थात् अपनी मूल भावना को समझना है। यही प्रक्रिया दूसरे व्यक्ति पर भी लागू होती है। इसीलिए दो व्यक्ति विशेषों के सफलता के चित्र भले ही अलग-अलग हों, लेकिन सभी के लिए सफलता के चित्रण की अर्थात् खुशी व परिपूर्णता महसूस करने की प्रक्रिया एक ही है। इसीलिए सफलता के सिद्धांत सार्वभौमिक व अपरिवर्तनीय हैं।

वास्तव में सफलता किसी लक्ष्य तक पहुँचना या उसे हासिल करना नहीं है, बल्कि ऐसे काम करना या ऐसे रास्ते पर चलना है, जिससे खुशी व परिपूर्णता की अनुभूति हो। जिस कार्य को करने में हमें ऐसी अनुभूति होती है, जिसके बदले में हम किसी और फल की अपेक्षा नहीं करते। अर्थात् हम निस्स्वार्थ भाव से काम करने लगते हैं, तब हम सिर्फ कर्म करते हैं, यात्रा करते हैं और फिर किसी गंतव्य तक पहुँचना हमारा लक्ष्य नहीं रह जाता। तो आपकी, मेरी या किसी

और की सफलता का पैमाना खुशी व परिपूर्णता की अनुभूति ही है, कोई पहले से निर्धारित लक्ष्य नहीं। जब इस अनुभूति को हासिल के लिए हम कार्य करने लगते हैं, तो हमारी अधिकतम कार्य-क्षमता भी प्रकट होने लगती है, क्योंकि हम बिना थके, बिना रुके, बस आगे ही बढ़ते चले जाते हैं और हमारे कार्य दूसरों के लिए सहायक साबित होने लगते हैं।

सफलता की इस अनंत यात्रा पर चलनेवालों को दूसरों के प्रोत्साहन या पुरस्कार की भी अपेक्षा नहीं होती है, क्योंकि उनका सबकुछ खुशी व परिपूर्णता की अनुभूति ही होती है। इससे यह भी पता चलता है कि सफलता की यात्रा पर चलने का वास्तविक अर्थ व्यक्ति विशेष द्वारा अपनी अनंत संभावनाओं को प्रकट करने की यात्रा है। और सफलता की यह यात्रा अभी और यहीं शुरू की जा सकती है, बशर्ते कि आप सचमुच सफल होना चाहते हैं।

मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक आप सभी सुधी पाठकों को अपनी सफलता की यात्रा शुरू करने में सहायक सिद्ध होगी।

—प्रदीप ठाकुर

1

वास्तव में 'सफलता' है क्या?

हर व्यक्ति सफल होना चाहता है और यह उसका प्राकृतिक गुण या स्वभाव है। मनुष्य की जीव वैज्ञानिक संरचना ही ऐसी है, जो उसे कठिन परिश्रम करने और उपलब्धियों या सफलताओं का आनंद लेने के लिए प्रेरित करती है। यदि हमारे शरीर में दो स्वार्थी रसायन, एंडोर्फिन व डोपामाइन, नहीं होते, तो हमारे पूर्वज हजारों वर्ष पहले ही भूखे मर चुके होते। आज हम उनका यशोगान कर पाने के लिए बचे नहीं होते; और हमारी सभ्यता इस मुकाम पर नहीं पहुँची होती। एंडोर्फिन का एक ही काम है—शारीरिक दर्द को ढकना। प्रकृति ने इस रसायन के रूप में हमें व्यक्तिगत नशा प्रदान किया है। जब हम तनाव या डर महसूस करते हैं, तब मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र के भीतर मौजूद एंडोर्फिन हार्मोन समूह का स्राव शुरू हो जाता है। यह हमें बिल्कुल अफीम जैसा नशा प्रदान कर हमारे दर्द को ढक देता है। इसी प्रकार डोपामाइन दूसरा महत्त्वपूर्ण रसायन है, जिसे प्रकृति ने हमें हमारे विकास के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य करने के पुरस्कार के रूप में प्रदान किया है। जब हम किसी जरूरी काम, महत्त्वपूर्ण परियोजना या बड़े लक्ष्य को पूरा करते हैं, तब मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र के भीतर मौजूद डोपामाइन हार्मोन समूह का स्राव शुरू हो जाता है, जो हमें संतोष का अनुभव प्रदान करता है।

फिर भी अधिकतर लोग सफल क्यों नहीं हो पाते? वे अपने प्राकृतिक गुणों का उपयोग क्यों नहीं कर पाते? वास्तव में सफलता की स्वाभाविक इच्छा रखनेवाले अधिकतर लोगों की समस्या यह नहीं है कि वे सफल नहीं हो सकते, बल्कि उनकी सफलता की राह की सबसे बड़ी व आम बाधा यह है कि वे सफलता का सही अर्थ ही नहीं निकाल पाते। वे समझ ही नहीं पाते कि वास्तव में सफलता है क्या? ईसाई भजन 'यह मेरे पिता की दुनिया है' के लिए प्रख्यात, 19वीं सदी के अमरीकी पादरी (प्रेस्बिटेरियन) व लेखक माल्टबी डेवनपोर्ट बेबकॉक ने सफलता के बारे में सटीक टिप्पणी की थी, 'यह सोचना सबसे आम व सबसे महँगी भूल साबित होती है कि सफलता किसी प्रतिभा, किसी चमत्कार या कुछ ऐसी चीजों से मिलती है, जो हमारे पास नहीं है।' तो सबसे बड़ा प्रश्न है कि हम सफलता के बारे में अपनी सोच को सही कैसे बनाएँ कि हमसे कोई महँगी भूल न हो?

पारंपरिक अवधारणा व सही चित्रण

सफलता की परिभाषा पहली बार में आसान लग सकती है। लेकिन जब सफलता को परिभाषित करने के लिए कहा जाता है, तो अधिकतर लोगों की सफलता के पारंपरिक विचारों का हवाला देते हैं, जैसे कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता

या प्रसिद्धि हासिल करना, सत्ता की स्थिति को प्राप्त करना या फिर धन इकट्ठा करना। हम इसे विश्व प्रतिष्ठित व्यक्तियों के उदाहरण से भी समझ सकते हैं। आमतौर पर अधिकतर लोग विलियम हेनरी बिल गेट्स III (विश्व के सबसे धनी अमरीकी कारोबारी दिग्गज व परोपकारी) की समृद्धि, अर्नाल्ड श्वार्जनेगर (ऑस्ट्रियाई मूल के अमरीकी अभिनेता-निर्माता, निवेशक, पूर्व पेशेवर बॉडी बिल्डर व राजनेता) व मर्लिन मुनरो (सुनहरे बालोंवाली गूँगी का प्रसिद्ध हास्य चरित्र निभानेवाली अमरीकी अभिनेत्री, जो 1950 के दशक की सबसे लोकप्रिय सेक्स प्रतीक बन गईं) जैसा शारीरिक गठन, अल्बर्ट आइंस्टाइन (जर्मनी में जन्मे विश्वप्रसिद्ध सैद्धांतिक भौतिक विज्ञानी, जिसने सामान्य सापेक्षता सिद्धांत विकसित किया है) जैसी तीक्ष्ण बुद्धि, माइकल जेफरी जॉर्डन (अमरीकी सेवानिवृत्त पेशेवर बास्केटबॉल खिलाड़ी व व्यवसायी) जैसा कसरती शरीर, डोनाल्ड ट्रंप (दिग्गज व्यवसायी व राजनेता, जो अमरीका के राष्ट्रपति भी चुने गए) जैसा व्यापारिक व राजनीतिक साहस, पोप फ्रांसिस (रोमन कैथोलिक चर्च के 266वें प्रमुख, जिन्हें मार्च 2016 में विश्व का सबसे लोकप्रिय नेता माना गया) जैसी लोकप्रियता या वाल्टर इलियास वॉल्ट डिज्नी (59 नामांकनों से 22 ऑस्कर जीतने का व्यक्तिगत विश्व कीर्तिमान स्थापित करनेवाला अमरीकी जीव-संचारण चलचित्र/एनीमेशन फिल्म निर्माता) जैसी कल्पनाशीलता को ही पारंपरिक रूप से सफलता का पैमाना मानते हैं।

सफलता के ये पारंपरिक पैमाने आज भी बहुत अधिक लोकप्रिय हैं। अधिकतर लोग इनमें से ही किसी एक जैसा बनने का सपना देखते हैं, उनकी नकल करने की कोशिश भी करते हैं, फिर भी उनके जैसा बन पाने में सफल नहीं हो पाते। क्योंकि वे सफलता का अर्थ ही नहीं समझ पाते हैं, इसीलिए दूसरों की नकल मारते हैं, और इस भटकन में अपनी वास्तविक सफलता का अवसर भी गवाँ देते हैं। वे हमेशा मनमोहक लक्ष्यों के पीछे ही भागते रहते हैं, लेकिन कभी अपने भीतर झाँकने की कोशिश नहीं करते कि किस कार्य में उन्हें सही मायने में खुशी व परिपूर्णता महसूस होती है। जब आप यही नहीं जानते हैं कि कौन सा कार्य आपको सचमुच में खुशी दे सकता है, तो फिर आप अपने लिए अच्छे लक्ष्य कैसे तय कर सकते हैं? और जब आप स्वयं की वास्तविक जरूरत को समझे बिना ही दूसरों की उपलब्धियों के पीछे भागते फिरते हैं, तो आपका असफल होना भी तो पहले से ही निश्चित रहता है।

जी हाँ, सफलता के लक्ष्य तय करने से पहले आपका पहला काम यह पता लगाना है कि आपके लिए सही मायने में महत्त्वपूर्ण क्या है। और जब आप ऐसा करते हैं, तो आप सफलता की पारंपरिक अवधारणाओं के प्रभाव की उलझनों से स्वयं को आजाद करते हैं। यह लक्ष्य-संरचना बनाने की दिशा में आपका पहला कदम होता है, और अंततः आप सफलता का सही रास्ता बनाना शुरू कर देते हैं।

याद रखें कि प्रकृति ने हम सभी को अद्वितीय स्वरूप प्रदान किया है। इसीलिए हम व्यक्ति विशेष माने व कहे जाते हैं। अर्थात् भले ही हम एक ही माता-पिता से जन्म लिये हों, लेकिन हर व्यक्ति विशेष है, दूसरों से बिल्कुल अलग। इसीलिए किन्हीं भी दो व्यक्तियों के चित्र एक जैसे नहीं हो सकते। आपको अपना चित्र बनाना है, अर्थात् अपनी मूल भावना को समझना है। यही प्रक्रिया दूसरे व्यक्ति पर भी लागू होती है। इसीलिए दो व्यक्ति विशेषों की सफलता के चित्र भले ही अलग-अलग हों, लेकिन सभी के लिए सफलता के चित्रण की खुशी व परिपूर्णता महसूस करने की प्रक्रिया एक ही है। इसीलिए सफलता के सिद्धांत सार्वभौमिक भी हैं व अपरिवर्तनीय भी।

स्वामी विवेकानंद कहते हैं, 'सच्ची सफलता का, सच्चे सुख का महान् रहस्य यह है, जो पुरुष या स्त्री वापसी के बारे में नहीं पूछता है, पूरी तरह से निस्स्वार्थ व्यक्ति सबसे सफल है।' इस परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि वास्तव में सफलता किसी लक्ष्य तक पहुँचना नहीं है, उसे हासिल करना नहीं है, बल्कि ऐसे काम करना है या ऐसे रास्ते पर चलना है, जिससे खुशी व परिपूर्णता की अनुभूति हो। जिस कार्य को करने में हमें ऐसी अनुभूति होती है, उसके बदले में हम किसी और फल की अपेक्षा नहीं करते। अर्थात् हम निस्स्वार्थ भाव से काम करने लगते हैं। तब हम सिर्फ कर्म करते हैं, यात्रा करते हैं और फिर किसी गंतव्य तक पहुँचना हमारा लक्ष्य नहीं रह जाता। तो आपकी, मेरी या किसी और की सफलता का पैमाना खुशी व परिपूर्णता की अनुभूति ही है, कोई पहले से निर्धारित लक्ष्य नहीं। जब इस अनुभूति को हासिल के लिए हम कार्य करने लगते हैं, तो हमारी अधिकतम कार्य-क्षमता भी प्रकट होने लगती है, क्योंकि हम बिना थके, बिना रुके, बस आगे ही बढ़ते चले जाते हैं और हमारे कार्य दूसरों के लिए सहायक साबित होने लगते हैं। सफलता की इस अनंत यात्रा पर चलनेवालों को दूसरे के प्रोत्साहन या पुरस्कार की भी अपेक्षा नहीं होती है, क्योंकि उनका सबकुछ खुशी व परिपूर्णता की अनुभूति ही होती है। इससे यह भी पता चलता है कि सफलता की यात्रा पर चलने का वास्तविक अर्थ व्यक्ति विशेष द्वारा अपनी अनंत संभावनाओं को प्रकट करने की यात्रा है। अर्थात् आपको अपनी सफलता के लिए स्वयं की क्षमताओं की खोज कर उनका लगातार सदुपयोग करना है। और सफलता की यह यात्रा अभी और यहीं शुरू की जा सकती है, बशर्ते कि आप सचमुच सफल होना चाहते हों।

क्या है मानव जीवन का मूल उद्देश्य?

सफलता की परिभाषा में हमने इसे लक्ष्य नहीं, यात्रा कहा है। यहाँ भी मैं लक्ष्य की जगह उद्देश्य का उपयोग कर रहा हूँ। वैसे सरसरी तौर पर लक्ष्य व उद्देश्य के अर्थों में कोई विशेष अंतर नहीं होता है। लेकिन लक्ष्य किसी विशेष गंतव्य तक पहुँचने या किसी विशेष उपलब्धि को हासिल करने तक सीमित हो

सकता है, लेकिन उद्देश्य किसी कार्य विशेष को करने की मूल भावना को प्रकट करता है। जैसा कि स्वामी विवेकानंद ने कहा कि सच्ची सफलता निस्स्वार्थ भाव से काम करनेवालों को मिलती है। तो यदि हम अपने जीवन में सफलता चाहते हैं, तो हमारे जीवन का लक्ष्य व उद्देश्य निस्स्वार्थी बनना ही है। लेकिन इस दार्शनिक स्थिति को प्राप्त करने के लिए हमें स्वयं को पहचानना होगा, अर्थात् ईश्वर ने जिस निश्चित उद्देश्य के लिए बनाया है, उसकी खोज करनी है। और यह काम कोई और नहीं, बल्कि स्वयं आपको ही करना होगा।

ध्यान रहे कि यदि जीवन के वास्तविक उद्देश्य को खोज पाना बहुत मुश्किल नहीं है, तो आसान भी नहीं है। इसके लिए आधे-अधूरे मन से काम नहीं चलेगा, आपको शांत-चित्त भाव से अपनी अंतरात्मा की आवाज सुनने की कोशिश करनी होगी, अपने स्वभाव को पहचानना होगा, अपनी क्षमताओं को परखना होगा, तभी आप समझ पाएँगे कि ईश्वर ने आपको क्यों बनाया है और उस उद्देश्य को आप कैसे पूरा कर सकते हैं। और जब तक आप स्वयं को नहीं जान पाते हैं, तब तक आप अपनी सफलता की राह भी तय नहीं कर सकते। यही कारण है, अधिकांश सफलतम लोगों को भी शुरुआती जीवन में कई असफलताओं का सामना करना पड़ता है।

लेकिन सफल व आम लोगों की भटकन में काफी अंतर होता है। सफल लोगों के लिए असफलताएँ सही राह खोजने की सजग कोशिशें होती हैं। वे शुरुआती जीवन में अपने मूल उद्देश्य के संकेत को पहचानने लग जाते हैं और उस दिशा में कदम बढ़ाते चले जाते हैं जिन्हें बाकी दुनिया असफलता समझती है। वे सफल व्यक्तियों के लिए सफलता की अनंत यात्रा के पड़ाव भर होते हैं। हर असफलता उन्हें सही रास्ते की दिशा बताती है और वे अंततः अपने असली रास्ते पर पहुँच ही जाते हैं। फिर उनकी यात्रा में किसी प्रकार की कोई बाधा नजर नहीं आती। लेकिन इसके उलट, जो अपने जीवन के मूल उद्देश्य के संकेतों को नहीं समझ पाते, वे दूसरों की राह पर चलने की कोशिश करते हैं, और कभी अपना असली रास्ता खोज नहीं पाते। और जब कोई व्यक्ति अपना रास्ता ही नहीं ढूँढ़ सकता है, तो फिर उसके सफल होने का तो सवाल ही नहीं उठता। ऐसे ही लोग जीवन भर भटकते रहते हैं और अपनी असफलताओं के लिए अपनी परिस्थिति व भाग्य को कोसते रहते हैं।

नाजी नरसंहार शिविर से जीवित बच निकले ऑस्ट्रियाई तंत्रिका विज्ञानी (न्यूरोलॉजिस्ट) व मनोचिकित्सक (साइकोलॉजिस्ट) विक्टर एमिल फ्रेंकल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'मैनस सर्च फॉर मीनिंग' (1946) में जीवन के उद्देश्य का मार्मिक चित्रण किया है। असल में फ्रेंकल ने इस पुस्तक में द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान औस्चविज (पोलैंड) स्थित एकाग्रता शिविर के कैदी के रूप में अपने अनुभवों को लिपिबद्ध किया है। फ्रेंकल ने सभी कैदियों द्वारा अनुभव की गई तीन मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं की पहचान की है—शिविर में प्रवेश के

प्रारंभिक चरण के झटके; शिविर जीवन के आदी होने के बाद की उदासीनता, जिसमें कैदी केवल उसी को महत्त्व देता है, जो उसे व उसके दोस्तों के जीवित रहने में मदद करता है; और व्यक्तित्व-वंचना (डीपर्सनलाइजेशन), नैतिक विकृति, कड़वाहट व मोहभंग की प्रतिक्रियाएँ।

फ्रेंकल का निष्कर्ष है कि जीवन का उद्देश्य जीवन के हर पल में पाया जाता है; जीवन कभी भी उद्देश्य में रहना नहीं छोड़ता है, यहाँ तक कि दुःख और मौत में भी। जब अधिकारियों ने एक गुमनाम साथी कैदी को बचाने की कोशिश के घातक प्रतिशोध के रूप में शिविर के कैदियों पर सामूहिक उपवास थोप दिया था, तब फ्रेंकल ने समूह चिकित्सा सत्र (ग्रुप थेरैपी सेशन) के माध्यम से कैदियों को उत्साहित करने की कोशिश की थी। उसने कैदियों के समक्ष अपने विचार प्रस्तुत किए थे—गंभीर हालत में रहनेवाले हर किसी की तरफ देखनेवाला कोई-न-कोई दोस्त, परिवार का सदस्य या यहाँ तक कि भगवान् है, जो निराश होने की उम्मीद नहीं करेंगे। फ्रेंकल ने अपने अनुभव से निष्कर्ष निकाला है कि एक कैदी की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएँ पूरी तरह से उसके जीवन की परिस्थितियों का परिणाम नहीं, बल्कि पसंद की स्वतंत्रता भी हैं, जो गंभीर पीड़ा में भी हमेशा उसके पास रहती हैं। अपने आध्यात्मिक स्वय (स्पिरिच्युअल सेल्फ) पर कैदी की आंतरिक पकड़ भविष्य में आशा रखने पर निर्भर करती है और कैदी एक बार उस आशा को खो देता है, तो वह बरबाद हो जाता है।

एकाग्रता शिविर की कठोर परिस्थितियों व अत्यधिक पीड़ाओं के बीच रहते हुए फ्रेंकल ने जीवन के उद्देश्य खोजने का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किया है। उसने एकाग्रता शिविर का सजीव चित्रण इस प्रकार से किया है—

''हमने शिविर के साथ-साथ आगे बढ़ती हुई, बड़े पत्थरों व कीचड़ भरे विशाल डबरों से गुजरनेवाली सड़क पर अँधेरे में ठोकरें खाई हैं। साथ में चल रहे पहरेदार हमारे ऊपर चिल्ला रहे थे और अपने राइफलों के कुंदों से हमें चला रहे थे। जिस किसी के पैरों में अत्यधिक पीड़ा हो रही थे, वे अपने पड़ोसी की बाँहों से खुद की सहायता करते थे। मुश्किल से एक शब्द बोला जाता था; बर्फीली हवा बातचीत के लिए प्रोत्साहित नहीं करती थी। अपने उलटे कॉलर के पीछे अपना मुँह छिपाए मेरे बगल में चलते हुए आदमी ने अचानक फुसफुसाया था, 'यदि हमारी पत्नियाँ हमें अभी देख पातीं! मुझे पूरी आशा है कि वे अपने शिविरों में अच्छी-भली हैं और नहीं जानती कि हमारे साथ क्या हो रहा है!'

''वह अपनी पत्नी का विचार भी मन में ले आया था। और जब हम मीलों ठोकरें खाते रहे थे, बर्फीले स्थानों पर फिसलते रहे थे, बार-बार एक-दूसरे की सहायता कर रहे थे, एक-दूसरे को ऊपर व आगे खींचते रहे थे, तब कुछ भी नहीं कहा गया था, लेकिन हम दोनों को पता था कि हममें से प्रत्येक अपनी पत्नी के बारे में सोच रहा था। कभी-कभी मैं आकाश को देखता था, जहाँ सितारे मद्धिम पड़ने लगे थे और बादलों के अँधेरे किनारे के पीछे से सुबह का गुलाबी प्रकाश

फैलना शुरू हो गया था। लेकिन मेरे मन में मेरी पत्नी की छवि थी, अलौकिक तीक्ष्णता से इसकी कल्पना कर रहा था। मैंने उसे मुझे उत्तर देते सुना था, उसकी मुसकान, उसकी बेबाक व उत्साहजनक छवि देखी थी। असली थी या नहीं, तब उसकी छवि सूर्य की तुलना में तो और अधिक चमकदार थी, जो कि उगना शुरू हो गया था।

''एक विचार ने मुझे बाँध लिया था—अपने जीवन में पहली बार मैंने सच को देखा था, जैसा कि यह कई कवियों के गीतों द्वारा रखा गया है, बहुत से विचारकों द्वारा अंतिम ज्ञान के रूप में घोषित किया गया है। सत्य वह प्रेम, परम व सर्वोच्च लक्ष्य है, जिसे करने की मनुष्य कामना कर सकता है। तब मैंने सबसे बड़े रहस्य का अर्थ समझा था, जो मानव-कविता और मानव-सोच व विश्वास को प्रदान करना है—आदमी की मुक्ति प्यार के माध्यम से और प्यार में है।

मैं समझ गया कि कैसे एक आदमी, जिसके पास इस दुनिया में कुछ भी नहीं बचा है, अपनी प्रेयसी के चिंतन में अभी भी परमानंद को जानता हो सकता है, चाहे यह केवल संक्षिप्त पल के लिए हो। घोर एकाकीपन की स्थिति में जब आदमी अपने आपको सकारात्मक क्रियाकलापों में अभिव्यक्त नहीं कर सकता, जब उसकी एकमात्र उपलब्धि सही तरीके से सम्मानजनक तरीके से अपने दुःखों को भुगतने में शामिल हो सकती है, तो इस तरह की स्थिति में आदमी अपनी प्रेमिका की जिस छवि को वहन करता है, उसके प्यार भरे चिंतन के माध्यम से परिपूर्णता हासिल करता है। मैं अपने जीवन में पहली बार इन शब्दों के अर्थ को समझने में सक्षम था, देवदूत (ब्रह्मांड की) अनंत महिमा के निरंतर चिंतन में खोए हुए हैं...।''

फ्रेंकल की तरह हर कोई अपने जीवन का मूल उद्देश्य जान सकता है। यदि आप स्वयं से निम्नलिखित प्रश्न पूछें, तो आपको भी अपने जीवन का उद्देश्य पता करने में मदद मिल सकती है।

सबसे पहला सवाल—मैं क्या खोज रहा हूँ? ध्यानपूर्वक अपने स्वाभाविक क्रियाकलापों की छानबीन करें। हर व्यक्ति के मन में ऐसी प्रबल इच्छा रहती है, जो उसकी सोच व भावनाओं में कहीं गहरे में दबी होती है। आपके भीतर भी कोई-न-कोई ऐसी इच्छा जरूर होगी, जो आपको हर पल बेचैन किए रखती है। कुछ लोगों को बचपन में ही अपनी सबसे प्रबल इच्छा का पता चल जाता है, जबकि अधिकतर लोग आधी उम्र बीत जाने के बाद भी अपनी मूल भावना को जान नहीं पाते। वे इधर-उधर दूसरों की नकल में अपना अनमोल समय गँवाते रहते हैं, लगातार असफलताओं से निराश होकर अपने भाग्य को कोसते रहते हैं। यदि आप ऐसे लोगों की भीड़ में शामिल नहीं होना चाहते हैं, तो आपको इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ना ही होगा और यह उत्तर भी आपके पास ही है।

दूसरा सवाल—ईश्वर ने मुझे क्यों जन्म दिया है? यह प्रश्न सुनने में आध्यात्मिक लगता है, लेकिन यह अत्यंत व्यावहारिक है। हममें से हर कोई अपने आपमें

विशिष्ट है, अनोखा है। आपको यह तथ्य भी स्वीकार करना होगा कि इस संसार में कोई भी दूसरा नहीं है, जिसके पास आपके जैसे गुण, कुशलताएँ या संभावनाएँ हों। यही कारण है कि जब आप स्वयं की असली राह पर चलने की बजाय दूसरों की नकल करने की कोशिश करते हैं, तो असफलता ही हाथ आती है। अब आपको मान लेना चाहिए कि आप अनजाने में गलतियाँ कर रहे थे। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। यदि शांत होकर अपनी विशिष्ट योग्यताओं, संसाधनों, परिस्थितियों, संभावनाओं, अपने बीते हुए इतिहास की घटनाओं और अपने आस-पास के अवसरों पर विचार करेंगे, तो उनमें आपको अपने जीवन के उद्देश्य के कई संकेत मिलेंगे। जब आप इन संकेतों के सहारे अपने पिछले क्रियाकलापों की बारीक छानबीन करेंगे, तो आपको हैरानी होगी कि आप अपने जीवन का उद्देश्य जानने की दिशा में बहुत कुछ कर चुके हैं।

तीसरा सवाल—क्या मुझे अपनी क्षमता पर विश्वास है? अब तक हम जान चुके हैं कि ईश्वर ने हर किसी को विशिष्ट क्षमताओं के साथ जन्म दिया है। लेकिन विडंबना यही है कि अधिकतर लोग अपने जीवन में अपनी विशिष्ट क्षमताओं का ही बार-बार उपयोग करते हैं, लेकिन वे उसकी पहचान नहीं कर पाते। यही कारण है कि उन्हें अपनी क्षमताओं पर, अर्थात् अपने आप पर विश्वास ही नहीं होता है। और जब तक आप अपनी क्षमताओं की पहचान कर अपने आप पर विश्वास करना शुरू नहीं करते, तो आप अपनी उन विशिष्ट क्षमताओं के उपयोग के प्रति सावधान भी नहीं होते हैं। फिर आप उस दिशा में सजग प्रयास भी नहीं कर पाते। यही कारण है कि आप बस यों ही बिना उद्देश्य या लक्ष्य के भटकते फिरते हैं और निराश होकर बैठ जाते हैं। फिर तो उन क्षमताओं को निखारने का और अधिक विकसित करने का प्रश्न ही नहीं उठता है। और फिर आपके सफल होने की तो कोई संभावना भी नहीं बनती है।

इस संदर्भ में अमरीका के 26वें राष्ट्रपति (1901 से 1909) थियोडोर रूजवेल्ट जूनियर का यह कथन भी हमें अपने जीवन के उद्देश्य को जानने में मदद कर सकता है, 'निर्णय के किसी भी क्षण में आप जो सबसे अच्छी बात कर सकते हैं, सही बात है; अगली सबसे अच्छी बात गलत बात है; और सबसे बुरी बात जो आप कर सकते है, वह कुछ भी नहीं है।' इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी व्यक्ति विशेष के लिए सबसे अच्छी व सबसे सही बात (अर्थात् उसके जीवन का उद्देश्य) वही है, जिसे वह अपनी स्वाभाविक क्षमताओं के साथ कर सकता है। इस कथन की बारीकी पर ध्यान देना जरूरी है कि जब हम अपनी क्षमताओं को जान लेते हैं, उनपर (अपने आप पर) विश्वास करने लगते हैं, तो हम अपने जीवन के मूल उद्देश्य को जान लेते हैं और फिर उसी के अनुसार काम करते हैं, तो उसे करने में आनंद भी आता है और सफलता भी सुनिश्चित ही रहती है। यही कारण है कि अपने आपको, अपने स्वभाव को समझना सबसे अहम है।

और अब अंतिम सवाल—मैं कब (कहाँ व कैसे) शुरू करूँ? इसका जवाब भी रूजवेल्ट के ही इस कथन में मिलता है, आपके पास जो है, उसके साथ आप जहाँ हैं, आप जो कर सकते हैं, करें। जी हाँ, सफल होने के लिए जो भी जरूरी चीजें है, वे आपके पास पहले से ही मौजूद हैं, बस आपको यह समझ आने की जरूरत है कि आपके पास अपना सबसे सही काम करने के लिए सबकुछ है। फिर देरी किस बात की? आप अभी, इसी वक्त, अपने जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करनेवाले काम शुरू कर सकते हैं। रूजवेल्ट के उपरोक्त कथन को फिर से पढ़ें। यदि आप अपने स्वाभाविक काम को करने की बजाय दूसरा सबसे अच्छा विकल्प ढूँढ़ते हैं, तो वह गलत बात है। और किसी भी व्यक्ति के लिए सबसे बुरी बात यही होती है कि वह कुछ भी नहीं करता। इसीलिए काम करना जरूरी है, लेकिन यदि अपनी स्वाभाविक क्षमताओं के मुताबकि काम करें, तो सफलता न केवल सुनिश्चित रहती है, बल्कि वह आसानी से हासिल होती है।

याद रखें कि संसार में ऐसे लोगों की संख्या बहुत अधिक है, जो अपने जीवन के उद्देश्य को जानने की कोशिश नहीं करते हैं और अपनी दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताओं के अनुसार ही जीते रहते हैं। इसका परिणाम यह है कि अधिकतर लोगों को दूसरों के आदेश मानने पड़ते हैं, यानी दूसरों की नौकरी करनी पड़ती है। फिर आप स्वयं के स्वामी नहीं रहते। और जब आप अपने स्वामी नहीं हो सकते हैं, तो आपको कोई-न-कोई स्वामी ढूँढ़ना पड़ता है, और उसके आदेशों का पालन भी करना पड़ता है। फिर आप स्वयं को दूसरों को सौंप देते हैं, अपनी स्वाभाविक स्वतंत्रता को गँवा बैठते हैं और परतंत्रता को स्वीकार कर लेते हैं। मैंने जान-बूझकर गुलामी शब्द का प्रयोग नहीं किया है, क्योंकि यह सच्चाई कुछ ज्यादा ही कड़वी है। लेकिन यदि अपने मनुष्य जीवन को सचमुच में सफल करने को इच्छुक हैं, तो आपको दूसरों की गुलामी छोड़नी पड़ेगी, स्वयं को आजाद करना होगा। और यह सब तभी हो सकेगा, जब आप अपने जीवन के उद्देश्य को ढूँढ़ लेंगे और उसी के मुताबिक अपनी जीवन-यात्रा को आगे बढ़ाएँगे।

कैसे करें स्वयं की क्षमता का विकास?

जब आप अपने जीवन के मूल उद्देश्य की ओर अपनी स्वाभाविक क्षमताओं की पहचान कर लेते हैं, तो आपके कदम अपने आप सफलता की दिशा में ही आगे बढ़ने लगते हैं। और ज्यों-ज्यों आप उस दिशा में आगे बढ़ते हैं, तो आपको अपनी उन कमजोरियों (अक्षमताओं) का भी पता चलता है, जो आपकी संभावनाओं को बाधित करती हैं। फिर जब आप उन अक्षमताओं को दूर करने की कोशिश करते हैं, तो आपकी स्वाभाविक क्षमता और अधिक निखरकर सामने आती है। यह मनुष्य की स्वयं की क्षमता के विकास की निरंतर चलनेवाली स्वाभाविक प्रक्रिया है।

फोर्ड मोटर कंपनी के संस्थापक हेनरी फोर्ड ने मनुष्य की असीम क्षमताओं के बारे में महान् प्रेरणादायक घोषणा की है—ऐसा कोई जीवित व्यक्ति नहीं, जो अपनी सोच से अधिक कार्य करने में समर्थ न हो। अर्थात् हममें से अधिकतर लोग अपनी स्वाभाविक क्षमताओं को कम आँकते हैं। क्योंकि हम लोग आमतौर पर ऐसे वातावरण में पलते-बढ़ते हैं, जहाँ सफलताओं की तुलना में असफलताओं का अनुपात बहुत अधिक रहता है, जहाँ निराशाओं के बादल आशाओं की किरणों को मद्धिम बनाए रखते हैं। इसीलिए हम अपनी स्वाभाविक क्षमताओं को आजमाने से डरते हैं। जब हम अपनी पूरी क्षमता का उपयोग ही नहीं करते हैं, तो उसका नतीजा भी तो अधूरा ही निकल पाता है और हम स्वयं को कम करके आँकने लगते हैं। यह स्वाभाविक मनोवैज्ञानिक प्रभाव है और इस प्रभाव से स्वयं को बाहर निकालना ही स्वयं की क्षमता के विकास की दिशा में पहला कदम बढ़ाना होता है। ज्यों-ज्यों हम इस दिशा में आगे बढ़ते जाते हैं, हमारी असीम क्षमताएँ निखरनी शुरू हो जाती हैं, और हम चौंकानेवाले नतीजे हासिल करने लग जाते हैं। हमारी सोच की सीमाएँ फैलने लगती हैं। हेनरी फोर्ड ने अपने जीवन में स्वयं की ही नहीं, अनगिनत लोगों की अनंत क्षमताओं को विकसित होते हुए देखा था, तभी तो वह ऐसी महान् घोषणा कर सका था?

इसी संदर्भ में हेनरी फोर्ड का यह कथन भी महत्त्वपूर्ण है, 'यदि आपको लगता है कि आप एक चीज कर सकते हैं या लगता है कि आप एक चीज नहीं कर सकते, तो आप सही हैं।' इस कथन को एक बार फिर पढ़ें और सोचें कि फोर्ड हमसे क्या कहना चाहता है? जब हम स्वयं की क्षमता को पहचान लेते हैं, तो हम यह भी तय कर पाते हैं कि हम क्या कर सकते हैं, और क्या नहीं कर सकते। ऐसी स्थिति में हम अपने जीवन के मूल उद्देश्य को और अधिक स्पष्टता के साथ परख पाते हैं।

याद रहे, जब हम अपने जीवन के उद्देश्य की दिशा में कदम बढ़ाते हैं, तो हमारी तात्कालिक अक्षमताओं के कारण हमें विफलताओं का भी सामना करना पड़ता है। लेकिन इससे घबराने की आवश्यकता नहीं है। ये विफलताएँ हमें अपनी अक्षमताओं को दूर करने का मौका देती हैं। देखिए, हेनरी फोर्ड विफलता के बारे में क्या कहता है, 'विफलता बस फिर से शुरू करने का अवसर है, इस बार अधिक समझदारी से। विफलता अंतिम सफलता की सीढ़ी के शुरुआती पायदान हैं। ज्यों-ज्यों हम विफलता के पायदानों को पार करते जाते हैं, अर्थात् अपनी अज्ञानताओं या अक्षमताओं को दूर करते जाते हैं, हम पहले से अधिक समझदार व क्षमतावान् होते जाते हैं और सफलता के उतने ही निकट पहुँचते जाते हैं।' यहाँ पर हेनरी फोर्ड की यह बात भी ध्यान में रखना बहुत जरूरी है, 'कोई भी जो सीखना बंद कर देता है, बूढ़ा हो जाता है, चाहे वह बीस का हो या

अस्सी का। कोई भी जो सीखता रहता है, युवा रहता है। अर्थात् सीखने की या अपनी अज्ञानताओं या अक्षमताओं को दूर करने की कोई उम्र नहीं होती।'

आप जब स्वयं को जान लेते हैं, तभी से आप जीवन-उद्देश्य की सार्थक यात्रा शुरू कर पाते हैं। फिर आपकी अक्षमताएँ दूर होने लगती हैं, आपकी स्वयं की क्षमताओं का विकास भी शुरू हो जाता है, और आप सफलता की दिशा में आगे बढ़ते जाते हैं। हालाँकि बाकी दुनिया को बहुत बाद में आपकी सफलता का पता चल पाता है, लेकिन आप हर विफलता को जीतने के तत्काल बाद सफलता की नजदीक आती सुगंध को महसूस करने लगे हैं। यही वह अलौकिक सुगंध है, जो आपको अपने जीवन की अनंत संभावनाओंवाली यात्रा पर आगे बढ़ते जाने के लिए प्रेरित करती है। फिर दुनिया आपको कितना ही सफल क्यों न समझे, आप उस अलौकिक सुगंध (नशा) में बौराए हुए से आगे बढ़ते जाते हैं। कोई आपको सनकी कहता है, तो कोई अति-उत्साही, लेकिन आपकी चाल में कोई अंतर नहीं आता, आप बिना थके, बिना रुके बस अपने जीवन के मूल उद्देश्य की दिशा में आगे बढ़ते चले जाते हैं। इस क्रम में जन-साधारण की तुलना में आपकी क्षमताओं का इतना अधिक विकास हो जाता है कि लोग आपको असाधारण (एक्स्ट्राऑर्डिनरी) या अतिमानव (सुपरमैन) समझने लगते हैं। लेकिन आपको तो पता है कि आप वही हैं, जैसे ईश्वर ने आपको बनाया है। अंतर सिर्फ इतना है कि आपने स्वयं को, अर्थात् अपने जीवन के उद्देश्य को जान लिया है, जबकि बाकी लोग अभी भी अपने बारे में अनजान बने हुए हैं। विडंबना यही है कि वे आपको असाधारण व अतिमानव संबोधित कर स्वयं को साधारण मानव मान अपनी अकर्मण्यता (इनएक्शन) का औचित्य साबित करने की कोशिश करते हैं।

बहुसर्जक अंग्रेजी लेखक हर्बर्ट जॉर्ज (एच.जी.) वेल्स ने मनुष्य की असीम क्षमता व सफलता के बीच के संबंध को विचारोत्तेजक शैली में ऐसे प्रस्तुत किया है, सफलता का एकमात्र सही मापदंड एक तरफ, जो हम शायद कर सकते हैं और जो हम करते आ रहे हैं, और दूसरी तरफ, जो चीज हमने बनाई है और जो चीजें हमने आपने आपको बनाई हैं, के बीच का अनुपात है। इस तरह वेल्स का मानना था कि समृद्धि, प्रसिद्धि, सत्ता आदि सफलता के मानदंड नहीं हो सकते, बल्कि उसका सही मापदंड हमारी निहित क्षमता व हमारे द्वारा उसके उपयोग के बीच का अनुपात है। दूसरे शब्दों में, सफलता हमारी स्वयं की क्षमताओं के सदुपयोग का ही प्रतिफल होती है। तभी तो हमारे वैदिक ऋषियों ने हजारों वर्ष पहले 'श्वेताश्वतरोपनिषद्' में विश्व समुदाय के समक्ष इस सनातन आनंद-संदेश की घोषणा की थी, हे अमृत के पुत्रो! सुनो, हे दिव्यधामवासी देवगण! तुम भी सुनो, मैंने उस अनादि पुरातन पुरुष को प्राप्त कर लिया है, जो समस्त अज्ञान-अंधकार व माया से परे है। केवल उस पुरुष को जानकार तुम मृत्यु के चक्र से छूट सकते हो। दूसरा कोई पथ नहीं है। शिकागो विश्व

धर्म सम्मेलन में हिंदू धर्म पर निबंध पढ़ते हुए स्वामी विवेकानंद ने इसी श्लोक को उद्धृत करते हुए आगे कहा था, 'कैसा मधुर व आशाजनक संबोधन है यह —अमृत के पुत्रो! बंधुओ! इसी मधुर नाम अमृत के उत्तराधिकारी से आपको संबोधित करूँ, आप इसकी आज्ञा दें मुझे। निश्चय ही हिंदू आपको पापी कहना अस्वीकार करता है। आप तो ईश्वर की संतान हैं, अमर आनंद के भागी हैं, पवित्र व पूर्ण आत्मा हैं। आप इस मर्त्यभूमि पर देवता हैं। आप भला पापी? मनुष्य को पापी कहना ही पाप है, वह मानव-स्वरूप पर घोर लांछन है। आप उठें! हे सिहो! आएँ, और इस मिथ्या भ्रम को झटककर दूर फेंक दें कि आप भेड़ हैं। आप हैं आत्मा अमर, आत्मा-मुक्त, आनंदमय व नित्य। आप जड़ नहीं हैं, आप शरीर नहीं हैं; जड़ तो आपका दास है, न कि आप दास हैं जड़ के।

जी हाँ, तभी यह भी परम सत्य है कि हमारी क्षमताएँ हमारे लिए ईश्वर का उपहार हैं, और हम उन क्षमताओं का जो भी सदुपयोग करते हैं, वह हमारी तरफ से ईश्वर के चरणों में धन्यवाद के फूल हैं। लेकिन विडंबना यह है कि हममें से अधिकतर इस सनातन सत्य को समझने की कोशिश नहीं करते हैं, हम ईश्वर की संतान हैं और अनंत क्षमताओं के साथ पैदा हुए हैं। मनुष्य के रूप में हमारा केवल इतना कर्तव्य है कि हम अपनी क्षमताओं को पहचानें और उसका सदुपयोग करें। तभी तो हममें से अधिकतर वह नहीं बन पाते, जो बन पाने की पूरी क्षमता हमारे पास है। हम स्वयं की महानता को नहीं देखते और अपने आपको कमजोर मानने या कम करके आँकने की गलती करते हैं। यह हमारी अकर्मण्यता नहीं तो क्या है? तभी तो हेनरी फोर्ड जैसे कर्मयोगी उद्यमियों को कहना पड़ता है कि ऐसा कोई जीवित व्यक्ति नहीं है, जो अपनी सोच से अधिक कार्य करने में समर्थ न हो।

तो आइए, अब हम जानने की कोशिश करते हैं कि हम अपनी क्षमताओं के विकास के लिए क्या कुछ कर सकते हैं—

प्रमुख लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करें—सबसे पहले अपना प्रमुख लक्ष्य चुनें और उसपर अपना सारा ध्यान केंद्रित करें। हम सभी जानते हैं कि हम एक साथ दो या कई नावों पर सवारी नहीं कर सकते हैं। ऐसा न तो कोई कर सका है और न ही कर सकेगा। हम सभी बखूबी समझते हैं कि अपनी क्षमता के अधिकतम उपयोग के लिए हमें किसी एक लक्ष्य या उद्देश्य पर अपना सारा ध्यान केंद्रित करना पड़ेगा। यही कारण है कि आपको सबसे पहले अपने जीवन का मूल उद्देश्य ढूँढ़ना पड़ेगा। यह अनिवार्य है, क्योंकि इसके बिना आप अगला कदम नहीं बढ़ा सकते। जब आप अपना मूल उद्देश्य तय कर लेते हैं, अर्थात् यह सुनिश्चित कर लेते हैं कि आपको क्या करना है, तब आप उसपर अपना ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।

और जब आप ऐसा करना शुरू करते हैं, तो आपको अपने सामने कई बाधाएँ दिखाई देनी शुरू हो जाती हैं। ये बाधाएँ भी आपके द्वारा किए गए अनावश्यक

क्रियाकलापों के कारण ही खड़ी हुई हैं। हो सकता है कि आप अब तक इन्हीं को अपनी उपलब्धियाँ भी मान रहे हों। चूँकि आप दूसरी दिशा में बहुत आगे कदम बढ़ा चुके हैं, इसीलिए आपको फिर से मूल बिंदु पर वापस आने और बिल्कुल नई दिशा में चलना शुरू करने में परेशानी महसूस हो सकती है या फिर आप जोखिम उठाने से हिचक रहे हों। लेकिन याद रखें, कुछ पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ता है, जिसे हम त्याग करना भी कहते हैं। समझने की सबसे बड़ी बात यही है कि त्याग के बिना सफलता हाथ नहीं आ सकती। त्याग व सफलता का चोली-दामन का संबंध है। दोनों का अनुपात हमेशा बराबर रहता है। जितना बड़ा त्याग, उतनी बड़ी सफलता। यदि आप थोड़ा त्याग करेंगे, तो सफलता भी थोड़ी ही मिलेगी; और यदि आप बड़ी सफलता की चाहत रखते हैं, तो फिर उतना ही बड़ा त्याग भी करना पड़ेगा।

सुधार की कोशिशों को लगातार जारी रखें—अपना सबसे प्रमुख लक्ष्य चुनने के बाद सफलता की राह पर आगे बढ़ने के लिए सुधार की कोशिशों को लगातार जारी रखें। इस प्रक्रिया पर अडिग रहना बहुत जरूरी है, नहीं तो आपकी पहले की कोशिशें बेकार हो जाएँगी।

आपने 'कठोपनिषद्' के बाल नायक नचिकेता की कथा सुनी होगी कि उसके पिता वाजश्रवा ने उसे मृत्यु के देवता यमराज के पास भेजा था। तब यमराज ने नचिकेता के सवालों के उत्तर दिए थे और उसे आत्म-ज्ञान व योग की विधियाँ सिखाते हुए कहा था, 'उत्तिष्ठत जाग्रत् प्राप्य वरान्निबोधत, क्षुरासन्न धारा निशिता दुरत्यद्दुर्गम पथः तत् कवयो वदन्ति।' अर्थात् उठो, जागो! वरदान प्राप्त करने के बाद उसे समझो; विद्वान् कहते हैं कि उस्तरे की धार की तरह (अपनी आत्मा तक पहुँचने का) पथ है, चलने में कठिन व पार करने में मुश्किल। 19वीं शताब्दी के अंत में स्वामी विवेकानंद ने अपने देशवासियों की सम्मोहित मानसिक अवस्था को, उनकी सोई हुई आत्मा को जगाने के लिए अपने अमर संदेश के रूप में इस प्रेरणादायक श्लोक का बहुत बार उपयोग किया था, उठो, जागो! तब तक न रुको, जब तक अपने लक्ष्य को प्राप्त न कर लो। और वह लक्ष्य था—उपनिवेशवाद से देश की राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने का, विश्व में अद्वैतवाद के शांति-संदेश प्रचार का। वैसे जागने का अर्थ मनुष्य की अपनी वास्तविक प्रकृति को जगाना और समृद्धि के स्वाभाविक फलस्वरूप को प्राप्त करना भी है।

विश्व की सबसे बड़ी कंपनी (राजस्व के आधार पर) व अमरीकी बहुराष्ट्रीय खुदरा भंडार शृंखला वालमार्ट स्टोर्स के संस्थापक शमूएल मूर सैम वाल्टन के बारे में कहा जाता है कि उसके जीवन में ऐसा एक भी क्षण नहीं आया, जब उसने किसी तरह का कोई सुधार न किया हो। वास्तव में निरंतर सुधार के लिए प्रतिबद्ध होनेवाले ही सफलता का मूल-मंत्र प्राप्त कर लेते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जब हम हर दिन पिछले दिन की तुलना में स्वयं को सुधारने की

कोशिश करते हैं, अर्थात् पहले से बेहतर होने कोशिश करते हैं, तो हम स्वयं की क्षमता का विकास करते हैं। रोचक तथ्य यह है कि जब हम अपना निरंतर सुधार करते हुए आगे बढ़ते हैं, तो हमारे लिए उसका फल (अंतिम लक्ष्य या सफलता) उतना महत्त्वपूर्ण नहीं रह जाता, जितना कि उस राह पर चलते हुए स्वयं का विकास। संभवतः इसीलिए सैम वाल्टन अपने लोगों से कहा करता था, 'इसे करो। इसे आजमाओ। इसे ठीक करो।'

पिछला सबकुछ भूलकर आगे बढ़ें—भविष्य की तरफ आगे बढ़ने के लिए बीते समय के बोझ को उतार फेंकना सबसे जरूरी है। विडंबना यही है कि अधिकतर लोग अपने विगत को भुला नहीं पाते, और जहाँ कहीं भी जाते हैं अपने कंधे पर अतीत को लादे रखते हैं। वास्तव में भूतकाल लाश की तरह होता है, और हम अपनी लाश को अपने कंधों पर लादे रखकर स्वर्ग की सीढ़ियाँ नहीं चढ़ सकते। अर्थात् अपनी पिछली गलतियों के बोझ को लादे रखकर हम सफलता की ओर तेजी से कदम नहीं बढ़ा सकते।

अकसर यह भी देखने में आता कि लोग अपनी पिछली असफलताओं के बोझ से इतने अधिक लदे होते हैं कि सफलता की दिशा में पहला कदम बढ़ाने तक की हिम्मत नहीं जुटा पाते। याद रखें, सिर्फ आपसे ही गलतियाँ नहीं हुई हैं, बल्कि विश्व में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा, जिससे कोई-न-कोई गलती न हुई हो। लेकिन पिछली गलतियों के लिए आगे भी कुछ सही न करना, तो सबसे बड़ी गलती है। आप किसी भी सफल व्यक्ति की जीवनी पढ़िए, आपको पता चलेगा कि उनसे कितनी गलतियाँ हुई थीं। लेकिन सफल लोगों की सबसे बड़ी विशेषता यही देखने को मिलेगी कि उन्होंने अपनी गलतियों को ही सफलता की सीढ़ी बना ली थी, वे अपनी पिछली विफलताओं के बोझ से दबे नहीं थे। याद रखें कि बीता हुआ कल पिछली रात के साथ ही बीत चुका है, और अब वह आपकी राह की बाधा नहीं बन सकता। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि आप इस तथ्य को किस रूप में लेते हैं।

अब अफ्रीकी-अमरीकी समुदाय के प्रभावशाली नेता (1890 से 1915 के बीच) व शिक्षाविद् बुकर टालियाफेरो वाशिंगटन के जीवन की कठिनाइयों के बारे में जानते हैं। वह 1856 में गुलाम अफ्रीकी-अमरीकी महिला जेन के बेटे के रूप में दक्षिण-पश्चिम वर्जीनिया में जेम्स बरोज के बागान (फ्रैंकलिन काउंटी में हेलस फोर्ड के पास) में पैदा हुआ था। वह अपने जन्म के दिन, महीने और सटीक साल के बारे में कुछ नहीं जानता था। और यहाँ तक कि वह अपने पिता के बारे में भी कभी कुछ जान नहीं सका था। हालाँकि यह कहा जाता था कि पड़ोस के बागान में रहनेवाला श्वेत व्यक्ति उसका पिता था, लेकिन उसने किसी भी मौके पर बुकर के जीवन में कोई आर्थिक व भावनात्मक भूमिका नहीं निभाई थी। वह जन्म के बाद से ही एक गुलाम बालक था, जो बस बुकर के रूप में जाना जाता था। उसका न तो कोई उपनाम था और न ही कोई बीच का नाम। उसने

बाद में याद किया था, मैं अपने बचपन या शुरुआती लड़कपन के दौरान एक भी उदाहरण याद नहीं कर सकता, जब हमारा पूरा परिवार एक साथ मेज पर बैठा हो और भगवान् का आशीर्वाद माँगा गया हो तथा परिवार ने सभ्य तरीके से भोजन किया हो। और यहाँ तक कि बाद में भी वर्जीनिया के बागान में बच्चों को भोजन ठीक उसी तरह मिल रहा था, जिस तरह मूक जानवरों को मिलता है।

जब बुकर नौ वर्ष का लड़का था, तब अमरीकी सैनिकों ने वर्जीनिया में अपने क्षेत्र पर कब्जा किया था और परिवार मुक्ति उद्घोषणा के तहत अन्य अफ्रीकी अमरीकी गुलामों के साथ-साथ बुकर व उसके परिवार को आजादी हासिल करने का मौका मिला था। 1865 की शुरुआत में मुक्ति के उस दिन से बुकर बहुत रोमांचित हुआ था। उसने बाद में उस जीवन बदलनेवाली घटना को इस तरह याद किया था, 'महान् दिन करीब खींचते जा रहे थे, गुलाम-बसेरों में सामान्य से अधिक गीत गाए जा रहे थे। यह अधिक निर्भीक, अधिक गूँजनेवाले थे और रात में देर तक चलते थे। अधिकांश बागान गीतों के छंदों में आजादी के कुछ संदर्भ थे। किसी आदमी ने, जो अजनबी सा लगता था (मेरा अनुमान है, संयुक्त राज्य अमरीका अधिकारी), छोटा सा भाषण दिया था और फिर कुछ अधिक लंबा-सा पत्र पढ़ा था, मुझे लगता है, परिवार मुक्ति उद्घोषणा। पढ़ने के बाद हमें बताया गया था कि हम सभी मुक्त थे, और जा सकते थे, जब जहाँ हमें अच्छा लगे। मेरी माँ, जो मेरे बगल में खड़ी थी, आगे झुकी और बच्चों को चूमा, जबकि खुशी के आँसू उसके गालों से नीचे गिर रहे थे। उसने हमें समझाया कि इस सबका क्या मतलब था कि इस दिन के लिए वह कितने लंबे समय से प्रार्थना कर रही थी, लेकिन डरती थी कि वह देखने के लिए कभी जीवित नहीं रहेगी।'

मुक्ति के बाद जेन अपने परिवार को अपने पति वाशिंगटन फर्ग्यूसन के साथ शामिल करने के लिए पश्चिम वर्जीनिया ले गई थी, जो युद्ध के दौरान गुलामी से भागकर वहाँ रहने लगा था। वहीं पर पहली बार पूरी तरह अनपढ़ बुकर ने खुद को पढ़ाना सिखाने के लिए कठिन परिश्रम करना शुरु किया था और स्कूल भी जाने लगा था। लेकिन बुकर ने अपनी पिछली जिंदगी के लिए अपने भाग्य को कोसा नहीं था, कभी पछताया भी नहीं था, क्योंकि उसकी नजर अपने सुनहरे भविष्य पर टिकी हुई थी। उसे अपने जीवन का मूल उद्देश्य मिल गया था और वह स्वयं की क्षमता को बढ़ाता चला गया था। उसने अश्वेतों को समर्पित उच्च शिक्षा केंद्र टयुस्केजी इंस्टीट्यूट की स्थापना की, फिर नेशनल ब्लैक बिजनेस लीग की स्थापना की और फिर अफ्रीकी-अमरीकी समुदाय का इतना प्रभावशाली नेता बन गया था कि अक्तूबर 1901 में राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट ने अपने परिवार के साथ भोजन करने के लिए उसे व्हाइट हाउस में आमंत्रित किया। जी हाँ, वह पहला अफ्रीकी अमरीकी था, जिसे किसी राष्ट्रपति द्वारा वहाँ आमंत्रित किया गया था। तभी तो बुकर ने कहा था, 'मैंने यही जाना है कि

सफलता को इस बात से नहीं मापा जा सकता है कि आप जीवन में किस पद तक पहुँचे हैं, बल्कि इस बात से कि आपने वहाँ तक पहुँचने के प्रयास में कितनी रुकावटों को पार किया।'

अमरीकी लेखिका, राजनीतिक कार्यकर्ता व व्याख्याता हेलेन केलर एडम्स के बारे में पढ़ो, तो पता चलेगा कि 19 महीने की आयु में ही उसने अपने देखने व सुनने की शक्ति खो दी थी। लेकिन उसने अपनी गंभीर विकलांगता को अपने जीवन पर हावी नहीं होने दिया था। तभी तो वह पहली बहरी-अंधी व्यक्ति बन सकी थी, जिसने स्नातक-कला की उपाधि हासिल की थी। कई विषयों की विद्वान् लेखिका केलर ने काफी यात्राएँ की थीं और अपनी प्रतिबद्धताओं को लेकर भी काफी मुखर थी। सोशलिस्ट पार्टी ऑफ अमरीका व इंडस्ट्रियल वर्कर ऑफ द वर्ल्ड की सदस्या के रूप में उसने महिलाओं के मताधिकार, श्रम-अधिकार, समाजवाद व इसी तरह के अन्य उद्देश्यों के लिए कई अभियान भी चलाए थे। 1971 में उसे 'अलबमा वीमेंस हॉल ऑफ फेम' में शामिल किया गया था। पश्चिम टस्कंबिया (अलबामा) में उसका जन्मस्थान व संग्रहालय है और उसके जन्मदिन 27 जून को अमरीकी राज्य पेंसिल्वेनिया में 'हेलेन केलर दिवस' के रूप में प्रायोजित किया जाता है।

अमरीका के 32वें राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट को ही लें, तो वह 1921 में मात्र 39 वर्ष की आयु में पोलियो का शिकार बन गया था और उसे बाकी जिंदगी कमर से नीचे स्थायी पक्षाघात के साथ गुजारनी पड़ी थी। उसके बाद रूजवेल्ट ने अपना ध्यान राजनीति से हटाकर अपने कानूनी अभ्यास के साथ-साथ पढ़ने व डाक टिकट संग्रह जैसे अंतर्वासी शौकों में लगा दिया था और कई वर्षों तक लोगों की नजरों से बाहर रहा था। लेकिन उसने कभी भी अपनी बीमारी को अपने जीवन पर हावी नहीं होने दिया। सच्चाई तो यह है उसने कभी भी अपने स्थायी पक्षाघात को स्वीकार ही नहीं किया और जल चिकित्सा (हाइड्रोथेरैपी) सहित विभिन्न तरह के उपचार करता रहा था। इतना ही नहीं, 1926 में उसने वार्म स्प्रिंग्स (जॉर्जिया) में रिजॉर्ट खरीदा था, यहाँ बाकायदा पोलियो रोगियों के उपचार के लिए जल चिकित्सा केंद्र की भी स्थापना कर ली थी, जो अभी भी रूजवेल्ट वार्म स्प्रिंग्स इंस्टीट्यूट फॉर रिहैबिलिटेशन में चल रहा है। अपने कूल्हों व पैरों पर लोहे के धनुकोष्ठकों को पहने रहने के बावजूद उसने लगातार परिश्रम से छड़ी के सहारे अपने धड़ को घुमाकर खुद को कम दूरी तक चलाना सिखा लिया था। अपनी व्हीलचेयर का उपयोग करते हुए सार्वजनिक रूप से देखे जाने को लेकर वह बेहद सावधान रहता था और जन-संचार माध्यमों में अपनी विकलांगता की सूचनाओं को उभरने नहीं दिया था।

राजनीतिक जीवन की ओर लौटने के बाद रूजवेल्ट ने 1928 में सफलतापूर्वक न्यूयॉर्क के गवर्नर का चुनाव जीता था। 1929 से 1933 तक इस पद पर रहते हुए उसने विश्व महामंदी से मुकाबला करनेवाले कार्यक्रमों को चलाकर खुद को

सुधारवादी राजनेता के रूप में उभारा था। 1932 में जब महामंदी अपने चरम पर थी, तब रूजवेल्ट ने अपने प्रतिद्वंद्वी रिपब्लिकन पार्टी के उम्मीदवार राष्ट्रपति हर्बर्ट हूवर को पराजित कर अमरीका के राष्ट्रपति का पद जीत लिया था। उसने चार बार राष्ट्रपति चुनाव जीतने व सबसे लंबे समय तक राष्ट्रपति रहने का कीर्तिमान स्थापित किया था। 1932 से लेकर 1945 में अपनी मृत्यु तक विश्व राजनीति का केंद्रीय व्यक्तित्व बने रहकर विश्व महामंदी व द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अमरीका का नेतृत्व किया था।

❑

2

सफलता में सपनों का महत्त्व

अब तक आपने अपने जीवन के मूल उद्देश्य को पहचान लिया है; अपनी स्वयं की क्षमताओं का विकास व सदुपयोग करना शुरू कर दिया है और बीता हुआ सबकुछ त्यागकर भविष्य की राह पर आगे बढ़ने लगे हैं। अर्थात् अब आप अपनी सफलता की यात्रा पर निकल पड़े हैं। लेकिन इस यात्रा का एक और आवश्यक अंग है—परहित या दूसरों की सहायता। यदि आप परहित को अपनी सफलता-यात्रा का हिस्सा नहीं बनाते हैं, तो आपकी यात्रा एकांकी हो जाएगी। अर्थात् इसके बिना भी आप अपने उद्देश्य में सफल हो सकते हैं, लेकिन वह सफलता अधूरी होगी। परहित के बिना आपकी सफलता का लाभ दूसरों को नहीं मिल सकेगा, और आपकी सफलता आपके साथ-साथ दूसरों के लिए भी नुकसानदेह साबित हो सकती है। कहने का भाव यह है कि परहित आपकी सफलता का अंकुश होता है, जो आपको मानव समुदाय का हिस्सा बनाए रखता है। फिर आप ऐसा कोई भी कार्य नहीं करते, जो केवल आपकी स्वार्थपूर्ति के लिए ही हो। यह अंकुश आपको ईश्वर की संतान बनाए रखता है, उसकी अन्य संतानों को भी सफल बनाने के लिए आपको प्रेरित करता है और आपको अकेला नहीं होने देता।

ध्यान रखें, हमें जो कुछ भी प्राप्त होता है, उससे हम स्वयं जीते हैं, लेकिन जो हम प्रदान करते हैं, उससे दूसरे का जीवन बनाते हैं। फ्रेंच-जर्मन धर्मविज्ञानी, दार्शनिक, चिकित्सक व ऑरगनवादक अल्बर्ट श्वित्जर का दार्शनिक कथन है, 'मानव जीवन का उद्देश्य ही दूसरों की सेवा करना और उनकी सहायता करने की इच्छा व संवेदना प्रदर्शित करना है।' श्वित्जर ने इस जीवन-दर्शन को अपने जीवन में उतारा था।

श्वित्जर ईसाई पादरी का बेटा था। उसने कैसर विल्हेम विश्वविद्यालय (स्ट्रासबर्ग, एल्सेस, फ्रांस) में प्रोटेस्टेंट धर्मशास्त्र की उच्च शिक्षा पूरी करने के बाद 1899 में टुबिंगेन विश्वविद्यालय (टुबिंगेन, बादेन वुरटेमबर्ग, जर्मनी) में पी-एच.डी. शोध लेख प्रकाशित किया था। करीब साल भर सेंट निकोलस गिरिजाघर (स्ट्रासबर्ग) में सहायक पुजारी की सेवा देने बाद वह थेयोलॉजिकल कॉलेज ऑफ सेंट थॉमस का प्राचार्य बन गया। लूथरवाद (जर्मन तपस्वी व गिरिजाघर सुधारक मार्टिन लूथर के धर्मविज्ञान पर आधारित प्रोटेस्टेंट ईसाई धर्म की प्रमुख शाखा) का समर्थक होने के नाते उसने कुछ अकादमिक हलकों में प्रचलित ऐतिहासिक महत्ता पद्धति द्वारा दरशाए गए यीशु के धर्मनिरपेक्ष विचारों के साथ-साथ परंपरागत ईसाई विचारों को भी चुनौती दी थी।

श्वित्जर ने संत पॉल के रहस्यवाद में ईसामसीह धर्म में बने रहने (बीइंग इन क्राइस्ट) को प्राथमिकता दी थी। यही कारण था कि वह यूरोपीय उपनिवेशवादियों द्वारा अफ्रीकी नागरिकों पर सदियों तक किए गए ऐतिहासिक अपराध से भी विचलित था और ईसामसीह को माननेवाले समूचे यूरोपीय समुदाय की तरफ से पश्चात्ताप करना चाहता था। उसने चिकित्सक धर्म-प्रचारक (मेडिकल मिशनरी) के रूप में अफ्रीकी नागरिकों की सेवा करने का फैसला किया था। वहाँ जाने का फैसला किया था। इसके लिए उसने 1905 में 30 वर्ष की आयु में धर्मविज्ञान महाविद्यालय के प्राचार्य का पद त्याग दिया था और अगले सात वर्षों के गंभीर अध्ययन के बाद चिकित्सक (मेडिकल डॉक्टर) की उपाधि हासिल की थी। फिर 1912 में श्वित्जर ने पेरिस मिशनरी सोसायटी द्वारा अफ्रीका में ऑगूउए नदी पर स्थित फ्रांसीसी उपनिवेश लंबरेने (गैबॉन) में संचालित सेवा-कार्यक्रम में चिकित्सक धर्म-प्रचारक के रूप में स्वयं के खर्च पर काम करने का प्रस्ताव भेजा था। बड़ी कठिनाई से सारे संसाधन जुटाने के बाद श्वित्जर ने अपनी पत्नी के साथ 1913 में वहाँ पर छोटी सी झोंपड़ी में अस्पताल की स्थापना की थी, जो अब अल्बर्ट श्वित्जर हॉस्पिटल के रूप में अफ्रीका का प्रमुख चिकित्सा विज्ञान संस्थान है। इसी क्रम में श्वित्जर ने जीवन के प्रति सम्मान दर्शन का विकास किया था, जिसके लिए उसे 1952 में 'नोबेल पुरस्कार' प्रदान किया गया था।

लेकिन परहित में कार्य करने का अर्थ श्वित्जर की तरह कार्य करना नहीं है। आप जहाँ हैं, जो भी कर रहे हैं, वहीं से दूसरों की सहायता कर सकते हैं, बशर्ते आपमें परहित की चाहत व संवेदना हो। आप यह काम अपने परिवार, पड़ोस, कार्यालय में ही दूसरों की मदद कर शुरू कर सकते हैं। तो सफलता का मूल मंत्र अपने जीवन के उद्देश्य को ढूँढ़ना और उसे पूरा करने की कोशिश करते हुए दूसरों की सहायता करना है। हालाँकि सफलता की इस यात्रा और उसकी पूर्णता का अर्थ हर किसी के लिए अलग-अलग होता है, क्योंकि सभी के लिए सफलता का स्वरूप भी भिन्न होता है। लेकिन इस यात्रा के नियम नहीं बदलते और सभी पर एक समान लागू होते हैं। चाहे आप घर में हों या कार्यालय में या खेल-मैदान में या फिर मंदिर, मसजिद, गिरिजाघर में सफलता-यात्रा के नियम वहाँ भी लागू होते हैं।

लेकिन परहित को ध्यान में रखकर सफलता-यात्रा शुरू करने का अर्थ यह नहीं है कि आप किसी गंतव्य विशेष या लक्ष्य विशेष तक पहुँचने के बाद अचानक सफल हो जाएँगे। याद रहे कि सफलता एक अनंत-यात्रा है। लेकिन इसका अर्थ यह भी तो नहीं हो सकता कि बिना अपना गंतव्य तय किए ही अपनी यात्रा शुरू कर दें? जब तक हम अपनी यात्रा की दिशा तय नहीं कर लेते, तब तक हम न तो किसी भी उद्देश्य या लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं और न अपनी किसी भी क्षमता का उपयोग ही कर सकते हैं। तो यात्रा शुरू करने से पहले दिशा का

ज्ञान होना सबसे जरूरी है। इसका अर्थ यह है कि आपको अपने सपने की खोज करनी होगी।

मानवीय सपनों की महान् क्षमता

सभी जानते हैं कि लॉटरी की टिकट खरीदना कमाई का बहुत ही कम मौका देता है। फिर भी बहुत से लोग, जहाँ पर यह वैध है, इसे खरीदते हैं। अमरीका विश्व का सबसे सबसे धनी देश है, अनुमानतः वहाँ की लगभग आधी जनसंख्या लॉटरी खेलती है। 2012 में अमरीकियों ने करीब 1.46 अरब डॉलर मूल्य की मेगा-मिलियन की टिकटें खरीदी थीं। और ऐसा तब हुआ था, जब करीब 17.6 करोड़ टिकट खरीदनेवालों में से एक को यह लॉटरी मिलनेवाली थी। क्या आप भी लॉटरी में अपना निवेश दोगुना करेंगे? क्या आप भी लॉटरी टिकट की लागत के अलावा इसमें अपना समय भी खर्च करेंगे? मैं यह प्रश्न इसलिए पूछ रहा हूँ कि लॉटरी की ही तरह ही संगठन अपने कर्मचारियों के सपनों को आकार दे सकते हैं और जब सपने रोमांचक होते हैं और बाधाएँ विश्वसनीय लगती हैं, तो कर्मचारी उनको सच करने के लिए नाटकीय रूप से अपने श्रम व संसाधनों के निवेश बढ़ा देते हैं। इसके उलट, जब सपने उत्तेजक नहीं होते हैं और विश्वसनीयता का अभाव होता है, तो कर्मचारी उनसे अपने हाथ पीछे खींच लेते हैं।

निश्चित रूप से अधिकांश सपने धन या भौतिक संसाधनों के बारे में देखे जाते हैं। कई व्यवसायों में तो लोग सप्ताह में 80 घंटे से अधिक काम करने को इच्छुक होते हैं, और वे बिना थके, बिना रुके यात्राएँ करते रहते हैं, क्योंकि उन्हें बड़े लाभ या अधिलाभ की उम्मीद होती है। लेकिन अधिकतर लोगों के लिए केवल इस तरह के वित्तीय सपनों के पीछे भागते रहना ही पर्याप्त नहीं होता। वे अपने जीवन में कुछ अधिक गहरी व व्यक्तिगत आकांक्षाओं को भी पूरा करने की आवश्यकताएँ महसूस करते हैं।

अभी हाल में ही मैं एक बहुराष्ट्रीय दवा कंपनी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सी.ई.ओ.) मित्र से मिलने गया था, तब उसने मानवीय सपनों की असीम क्षमताओं के बारे में अपनी कंपनी की रोचक घटना का उल्लेख किया था। असल में वह सी.ई.ओ. किसी दवा विशेष की सीमित उपलब्धता की समस्या को दूर करने के बारे में संबंधित कार्य-समूहों के साथ गंभीर विचार-विमर्श कर रहा था। सभा कक्ष में उपस्थित अधिकांश वरिष्ठ पदाधिकारियों को पता था कि माँग की गलत भविष्यवाणी, अपर्याप्त सूचना, प्रौद्योगिकी प्रणाली (आई.टी. सिस्टम), माल की कमी आदि जैसी आपस में जुड़ी समस्याओं के कारण लक्ष्य पूरा कर पाना असंभव ही था। लेकिन जब सी.ई.ओ. ने उन्हें यह याद दिलाया कि वह एक जीवनरक्षक दवा है, जिसकी समुचित उपलब्धता नहीं होने से लाखों लोगों का जीवन खतरे में आ सकता है, तो अचानक सभा का माहौल

बदल गया। अब वे लोग अपनी समस्याओं के बारे में भूल गए थे और उस दवा के वितरण को सुनिश्चित करने के बारे में अपने नवाचारी सुझाव देने लगे थे। जल्द ही उस समस्या का हल निकल आया। इस तरह उस सी.ई.ओ. ने अपने कार्यसमूह के सदस्यों में लोगों की जीवन की सुरक्षा का उच्च मानवीय सपना जगा दिया था और सभी अपनी अन्य समस्याओं को भूलकर उसे साकार करने में जुट गए थे।

वैसे सभी कंपनियाँ ऐसे उत्पाद या सेवाएँ नहीं प्रदान करती हैं, जो सीधे तौर लोगों की जीवन-सुरक्षा से जुड़ी हुई हों, लेकिन सभी संगठन अपने ग्राहकों, हितधारकों (स्टॉकहोल्डर) व समाज के लिए मूल्य की रचना करते हैं। सच्चे मानवीय नेतृत्वकर्ता अपने कर्मचारियों को इसी मूल्य के साथ जोड़ने में मदद करते हैं, ताकि कंपनी का उद्देश्य उनके सपनों का हिस्सा बन जाए। लेकिन विडंबना यह है कि ऐसे नेतृत्वकर्ताओं का बहुत अभाव है। इसीलिए अधिकांश कंपनियाँ अपने कर्मचारी के सपनों को नैतिक व्यावसायिक मूल्यों के साथ जोड़ नहीं पाती हैं। इसका खतरनाक नतीजा यह होता है कि कर्मचारी हतोत्साहित व अलग-थलग महसूस करने लगते हैं और कंपनियाँ मूल्यवर्धन के अपने मूल उद्देश्य से भटक जाती हैं। जैसा कि लॉटरी प्रदर्शित करता है, अधिकांश लोग अपने सपने को पूरा करने के लिए बड़े दाँव खेलते हैं। महान् नेतृत्वकर्ता अपने लोगों को यह समझाने में मदद करते हैं कि किस प्रकार उनके व्यक्तिगत सपने संगठन के लक्ष्यों के साथ गठबंधन कर सकते हैं और उनके श्रम व कुशलताओं के बड़े निवेश सफलताओं की बाधाओं को दूर कर सकते हैं।

तो यह होती है सपनों की महान् परिवर्तनकारी क्षमता! मेरी मान्यता है कि हर किसी के मन में कोई-न-कोई बड़ा सपना जरूर पलता है। स्पष्ट है कि मैं लॉटरी जीतने की बात नहीं कर रहा। ध्यान दीजिए तो पता चलेगा कि लॉटरी जैसे उपायों से आर्थिक सफलता हासिल करने के विचार वर्तमान परिस्थितियों से पलायन करने की इच्छा से पनपते हैं, न कि हार्दिक इच्छा पूरी करने से। मैं तो उन मूल आकांक्षाओं की बात कर रहा हूँ, जो मानव-जन्म की सार्थकता साबित करती हैं, सीधे हरेक की आत्मा से जुड़ी हुई हैं। मनुष्य की यही स्वाभाविक आकांक्षाएँ ही उसकी अनंत क्षमताओं व गुणों को बाहर निकालने में मदद करती हैं, उसके सर्वोच्च आदर्श को आकर्षित करती हैं, और उसकी भावनाओं को आंदोलित करती हैं। ये नैतिक आकांक्षाएँ ही मनुष्य जीवन के मूल उद्देश्य का अविभाज्य हिस्सा हैं, और यही उसे सफलता-यात्रा में सही दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है।

पूँजीवादी युग के महान् स्वप्नद्रष्टा

20वीं शताब्दी को अमरीकी सदी यों ही नहीं कहा जाता है। हालाँकि अमरीका का इतिहास ऐसे एकाधिकारवादी पूँजीपतियों से भरा हुआ था,

जिनकी तुलना 12वीं सदी में रॉबर बैरन या लुटेरा दिग्गज संबोधित किए जानेवाले उन सामंती-अधिपतियों (फ्यूडल लॉर्ड) से की जाती है, जिन्होंने व्यापारी जहाजों को लूटकर या अवैध-अनैतिक व्यापारों से अपने सौभाग्य साम्राज्यों का निर्माण किया था। विश्वव्यापी आर्थिक महामंदी के दौरान 1934 में अमरीका के राजनीतिक व आर्थिक टीकाकार मैथ्यू जोसेफसन ने रॉबर बैरन नामक किताब लिखी थी, जो काफी चर्चित रही थी। उस किताब में जोसेफसन ने 28 पूँजीपतियों को शामिल किया था, जो ये थे—

जॉन याकूब एस्टर (अचल संपत्ति व रोआँ/फर; न्यूयॉर्क), एंड्रयू कारनेगी (इस्पात; पिट्सबर्ग व न्यूयॉर्क), विलियम ए क्लार्क (ताँबा; बुट्टे, मोंटाना), जे. कुक (वित्त; फिलाडेल्फिया), चार्ल्स क्रोकर (रेलमार्ग; कैलिफोर्निया) डैनियल ड्रियू (वित्त; न्यूयॉर्क), जेम्स बुकानन ड्यूक (तंबाकू; डरहम, नॉर्थ कैरोलिना), फील्ड मार्शल (खुदरा; शिकागो), जेम्स फिस्क (वित्त; न्यूयॉर्क), हेनरी मॉरिसन फ्लैग्लर (रेलमार्ग व तेल; न्यूयॉर्क व फ्लोरिडा), हेनरी क्ले फ्रिक (इस्पात; पिट्सबर्ग व न्यूयॉर्क), जॉन वार्न गेट्स (काँटेदार तार व तेल; टेक्सास), जे. गोल्ड (रेलमार्ग, न्यूयॉर्क), एडवर्ड हेनरी हैरीमन (रेलमार्ग; न्यूयॉर्क), चार्ल्स टी हिंडे (रेलमार्ग, जल परिवहन, जहाजरानी व होटल; इलिनोइस, मिसौरी, केंटकी व कैलिफोर्निया), मार्क हॉपकिंस (रेलमार्ग, कैलिफोर्निया), कॉलिस पॉटर हंटिंगटन (रेलमार्ग; कैलिफोर्निया), एंड्रयू डब्ल्यू. मेलॉन (वित्त व तेल; पिट्सबर्ग), जे.पी. मॉर्गन (वित्त व औद्योगिक समेकन; न्यूयॉर्क), जॉन क्लीवलैंड ओसगुड (कोयला खनन व लौह; कोलोराडो), हेनरी बी प्लांट (रेलमार्ग; फ्लोरिडा), जॉन डी. रॉकफेलर (तेल; क्लीवलैंड व न्यूयॉर्क), चार्ल्स एम. श्वाब (इस्पात; पिट्सबर्ग व न्यूयॉर्क, यूसुफ सेलिगमैन (साहूकारी; न्यूयॉर्क), जॉन डी. स्प्रेकेल्स (जल परिवहन, रेलमार्ग व चीनी; कैलिफोर्निया), लेलैंड स्टैनफोर्ड (रेलमार्ग; कैलिफोर्निया), कॉर्नेलियस वेंडरबिल्ट (जल परिवहन व रेलमार्ग; न्यूयॉर्क) व चार्ल्स टायसन यर्केस (सड़क रेलमार्ग; शिकागो)।

लेकिन हम यहाँ पर उपरोक्त सूची के दो ऐतिहासिक दिग्गजों जॉन डी रॉकफेलर व एंड्रयू कारनेगी के अलावा उनके ही नक्शे-कदम पर चलनेवाले 20वीं सदी के हेनरी फोर्ड बारे में भी चर्चा करेंगे। भले ही इन तीनों पर एकाधिकारवादी होने का आरोप लगाया जाता है, लेकिन ये आधुनिक युग के महान् स्वप्नद्रष्टा थे।

जॉन डी. रॉकफेलर—स्टैंडर्ड ऑयल कंपनी के सह-संस्थापक जॉन डेविसन रॉकफेलर सीनियर ने अपने 19 वर्षों के पेशेवर जीवन में ही 1882 में संयुक्त राज्य अमरीका के 90 प्रतिशत तेल कारोबार को नियंत्रित कर लिया था। टाइम.कॉम (15 जुलाई, 2015) के मुताबिक 1937 में मृत्यु के समय रॉकफेलर सीनियर की कुल संपत्ति 1.50 अरब डॉलर थी, जो अमरीका के तत्कालीन सकल घरेलू उत्पाद (ग्रॉस डोमेस्टिक प्रोडक्ट/जी.डी.पी.) का लगभग 2 प्रतिशत थी, जो

2014 में 341 अरब डॉलर के बराबर है। इस तरह वह अमरीका के इतिहास में सबसे अमीर व्यक्ति बन गया था और यह कीर्तिमान अभी भी कायम है।

जॉन डेविसन (डी.) रॉकफेलर सीनियर का जन्म 8 जुलाई, 1839 को न्यूयॉर्क सिटी से दक्षिण-पश्चिम में करीब 328 किमी. दूर ग्रामीण शहर रिचफोर्ड (टीओगा काउंटी, न्यूयॉर्क प्रांत) में हुआ था। वह छह भाई-बहनों में दूसरा व सबसे बड़ा भाई था। उसका पिता विलियम एवरी बिल रॉकफेलर अंग्रेजी व जर्मन मूल का था, जिसके पूर्वज रिचफोर्ड के जंगली इलाके में काफी सस्ती जमीन खरीदकर आ बसे थे। शुरू-शुरू में बिल रॉकफेलर ने लकड़ी काटने व बेचने का मेहनतकश काम किया था, लेकिन 20 की उम्र पार करते-करते उसने घुमंतू बिक्रीकर्मी के रूप में अनूठी चीजों के नाम पर ठगी व आवारागर्दी को अपना पेशा बना लिया था। बाद में उसने डॉ. विलियम लेविंग्सटन उपनाम से वनस्पति-चिकित्सक (बोटेनिक फिजिशियन) के रूप में संभोग-शक्ति (सेक्स पावर) बढ़ाने का जीवन-अमृत (एक्सलीर) बेचने का गोरखधंधा अपना लिया था। चूँकि बिल रॉकफेलर की गतिविधियाँ रहस्यमय थीं, इसीलिए स्थानीय लोग उसे शैतान (डेविल) बिल उपनाम से भी पुकारने लगे थे। लेकिन पिता की आवारगी व ठगी-ठोरी के विपरीत रॉकफेलर की माँ एलिजा डेविसन कुशल गृहिणी व श्रद्धापूर्वक नियमित रूप से गिरिजाघर जानेवाली धार्मिक महिला थी। वह नाइल्स (कायुगा काउंटी, न्यूयॉर्क प्रांत; रिचफोर्ड से 60 किमी. दूर) में आ बसे स्कॉटलैंड व आयरलैंड मूल के बड़े किसान की बेटी थी।

राहत की बात यह थी बिल रॉकफेलर के हिस्से में 60 एकड़ की जमींदारी थी, जिसे एलिजा ने बड़ी मेहनत के साथ सँभाला था और घर के खर्चों को पूरा करने की जी-तोड़ कोशिश करती रही थी। जब रॉकफेलर बड़ा हुआ था तो उसने रोजाना के खेती-बाड़ी के काम में माँ का हाथ बँटाना शुरू कर दिया था। वैसे तो एलिजा को बचपन से ही जरूरत से अधिक खर्च की आदत नहीं थी, लेकिन पति की फिजूलखर्ची व उसकी आवारगी के चलते आई विपरीत परिस्थिति ने उसे और भी ज्यादा मितव्ययी बना दिया था। पति से पूरी तरह निराश हो चुकी एलिजा की सारी उम्मीदें अपने बड़े बेटे से ही थी। इसीलिए उसने रॉकफेलर को मेहनतकश जीवन व मितव्ययिता का पाठ पढ़ाना शुरू कर दिया था कि जान-बूझकर की गई बरबादी दयनीय अभाव की हालत पैदा करती है। इसके साथ किशोर रॉकफेलर ने अपने पिता की उस सलाह को भी अमल में लाना शुरू कर दिया था कि माँग के मुताबिक चीजें परोसो और किसी भी सौदे का बड़ा हिस्सा अपने पास रखो। यही कारण था कि खेती-बाड़ी में माँ की मदद के अलावा उसने टर्की पालन, आलू व कैंडी की बिक्री व पड़ोसियों को ब्याज पर छोटी रकम उधार देकर अतिरिक्त कमाई के साधन ढूँढ़ लिये थे और परिवार की आमदनी बढ़ाने में भी योगदान करने लगा था।

जब रॉकफेलर किशोर ही था, तो उसका परिवार रिचफोर्ड से 64 किमी. दूर और ननिहाल नाइल्स से महज 15 किमी. दूर मोराविया गाँव में स्थानांतरित हो गया था। लेकिन जब वह 12 वर्ष का हुआ था 1851 में उसका परिवार ओवेगो (कायुगा काउंटी, न्यूयॉर्क प्रांत) में स्थानांतरित हो गया था, जहाँ उसका ओवेगो एकेडमी में दाखिला हुआ था। लेकिन दो वर्षों बाद रॉकफेलर का परिवार ओहियो प्रांत में क्लीवलैंड के उपनगर स्ट्रोंगसविल (कुयाहोगा काउंटी) में जा बसा था, जहाँ से उसने क्लीवलैंड के केंद्रीय उच्च विद्यालय में पढ़ाई पूरी करने बाद निजी वाणिज्य महाविद्यालय—फोल्सोमस मर्केंटाइल कॉलेज (अब चांसलर विश्वविद्यालय) से बहीखाता लेखन (बुककीपिंग) का 10 सप्ताह का पाठ्यक्रम पूरा किया था। अपने पिता की अनुपस्थिति व परिवार के लगातार स्थानांतरित होने के बावजूद युवा जॉन रॉकफेलर अच्छी तरह से व्यवहार करनेवाला गंभीर व अध्ययनशील लड़का था।

उस जमाने में क्लीवलैंड छोटा सा नगर था और वहाँ नौकरी मिलना काफी मुश्किल था। लेकिन जॉन रॉकफेलर ने लगातार कोशिश से महज 16 वर्ष की उम्र में ही हेविट एंड टटल नामक कृषि उपज के आढ़तिया व्यापारियों के प्रतिष्ठान में सहायक बहीखाता लेखक की नौकरी ढूँढ़ ली थी। फिर लगन व मेहनत की बदौलत अपने नियोक्ताओं का विश्वास जीतकर अगले चार वर्षों तक व्यापार संबंधी सभी पहलुओं का प्रशिक्षण व अनुभव हासिल करता रहा था। फिर 1859 में, 20 वर्ष की उम्र में जॉन रॉकफेलर ने मौरिस बी. क्लार्क की साझेदारी में कृषि उपज का आढ़त कारोबार शुरू कर दिया था। यही वह वर्ष था जब टाइटसविल्ले (पेंसिल्वेनिया) में अमरीका का पहला तेल-कुआँ खोदा गया था। उस समय वाणिज्यिक तेल का कारोबार बहुत ही शुरुआती दौर में था। व्हेल के तेल के महँगा हो जाने के कारण घरेलू ईंधन के लिए केरोसिन तेल की भारी माँग शुरू हो गई थी। पहले वर्ष में रॉकफेलर ने 4.50 लाख डॉलर मूल्य का आढ़त कारोबार किया था और फिर खाद्य सामग्रियों का थोक कारोबार भी शुरू किया था। लेकिन उसे यह समझते देर नहीं लगी थी, निकट भविष्य में केरोसिन सहित अन्य पेट्रोलियम पदार्थों की माँग तेज होनेवाली है। इसीलिए उसने तेल-शोधक कारखाना (ऑयल रिफाइनरी) की स्थापना के लिए साझीदार ढूँढ़ना शुरू किया था।

नौकरी छोड़ने के चार वर्षों के बाद 1963 में रॉकफेलर ने क्लीवलैंड में विकसित हो रहे नए औद्योगिक क्षेत्र में एंड्रूज, क्लार्क एंड कंपनी नाम से खुद को स्थापित कर लिया था। 1864 में रॉकफेलर ने ओहियो मूल निवासी लौरा सलेस्टिया स्पेलमैन से शादी कर ली थी, जिसका पिता समृद्ध व्यापारी व राजनीतिज्ञ था। अमरीकी नागरिक युद्ध (1861-65) के अंत तक क्लीवलैंड अमरीका में पाँच मुख्य शोधन केंद्रों पिट्सबर्ग, न्यूयॉर्क, पेंसिल्वेनिया व सबसे अधिक तेल उत्पन्न करनेवाले उत्तर-पश्चिमी पेंसिल्वेनिया क्षेत्र में से एक था। एंड्रूज, क्लार्क एंड

कंपनी ने इस मौके का लाभ उठाया था, क्लीवलैंड क्षेत्र का सबसे बड़ा तेल-शोधक कारखाना बन गया था। अब रॉकफेलर के लिए यह अनुमान लगाना बिल्कुल आसान हो गया था, यही सबसे संभावनाशील व लाभ देनेवाला उद्योग था।

रॉकफेलर में जोखिम को आँकने की जबरदस्त समझदारी थी और यही विशेषता उसे दूसरों से अलग स्थान व प्रतिष्ठा प्रदान करनेवाली थी। तेल-शोधन कारोबार में हाथ डालने से पहले ही रॉकफेलर ने इस तथ्य को अच्छी तरह से जान लिया था कि सट्टेबाजों ने इस कारोबार के जोखिम को अतार्किक बना दिया था। इस धंधे में वही सट्टेबाज भारी मुनाफा कमा रहे थे, जिन्हें कोई तेल-भंडार (ऑयल डिपॉजिट) हाथ आ गया था। दूसरी तरफ जिनके पास अपने तेल-स्रोत नहीं थे, वे भारी घाटे की चपेट में भी आ रहे थे। यही कारण था कि रॉकफेलर ने तेल-सट्टेबाजी की बजाय तेल-शोधन को अपना कारोबार बनाया था, जहाँ भले ही मुनाफा बहुत अधिक नहीं था, लेकिन ज्यादा स्थिर जरूर था। इसीलिए 1865 में रॉकफेलर ने आढ़त कारोबार छोड़कर तेल कारोबार पर ही ध्यान केंद्रित करने का फैसला किया था और 72,000 डॉलर में क्लार्क बंधुओं की हिस्सेदारी खरीदकर रॉकफेलर एंड एंड्रूज का गठन किया था। इस तरह अगले पाँच वर्षों में उसने तेल कारोबार का तेजी से विस्तार किया था और उसके साथ अपने साझीदारों की हिस्सेदारी भी खरीद ली थी। फिर उसने अपने छोटे भाई व अन्य साझीदारों के साथ मिलकर जून 1870 में स्टैंडर्ड ऑयल कंपनी का गठन किया था, जिसका वह सबसे बड़ा शेयरधारक व अध्यक्ष बन गया था।

फरवरी व मार्च 1872 के दो महीनों के बीच रॉकफेलर ने क्लीवलैंड क्षेत्र की कुल 26 प्रतिस्पर्धी तेलशोधन कंपनियों से 22 कंपनियों की बड़ी हिस्सेदारियाँ खरीद ली थीं। इस घटना को अखबारों ने क्लीवलैंड नरसंहार नाम से सनसनी बनाया था। उद्योग-जगत्, बुद्धिजीवियों व आम जनता में भी इस मामले को लेकर तीखी बहस का दौर चल रहा था, लेकिन रॉकफेलर के कान पर कोई जूँ नहीं रेंगी थी। उसने अपनी कारोबारी रणनीति को और जोर-शोर से लागू करना शुरू कर दिया था। धीरे-धीरे अन्य क्षेत्रों की कंपनियाँ भी रॉकफेलर के बिछाए जाल में फँसती चली गई थीं। 1982 में जब रॉकफेलर ने इन विभिन्न कंपनियों को स्टैंडर्ड ऑयल ट्रस्ट संगठित किया, तब अमरीका की रिफाइनरियों व पाइपलाइनों के 90 प्रतिशत कारोबार पर उसका नियंत्रण कायम हो गया था। इस तरह तेल कारोबार में आने के सिर्फ 19 वर्षों और अपने कारोबारी जीवन के 23 वर्षों में अमरीका तेल कंपनी का बादशाह बन गया था।

बेशक रॉकफेलर ने झटपट तेल-साम्राज्य स्थापित करने के लिए हर प्रकार के हथकंडे अपनाए थे, लेकिन उसने अपनी एकाधिकारवादी पूँजीपति की नकारात्मक छवि को सुधारने के लिए ईसाई नीति-शास्त्र से कड़ी मेहनत, बचत व धैर्य का उपदेश भी दिया था। इतना ही नहीं, रॉकफेलर ने एंड्रयू कारनेगी

जैसे अन्य प्रमुख समकालीन उद्योगपतियों के साथ-साथ आधुनिक परोपकार की संरचना को भी परिभाषित भी किया था और खुद को महान् परोपकारी व समाजसेवी साबित करने में भी सफल रहा था।

आखिर रॉकफेलर सीनियर ने अपने सौभाग्य को कैसे प्राप्त किया था? यह जानने के लिए हमें उसके जीवन व कार्यों को जानना-समझना पड़ेगा। विश्व के अधिकांश सफल व्यक्तियों की तरह वह भी चाँदी की चम्मच के साथ पैदा नहीं हुआ था। अन्य लोगों की तरह उसे भी कठोर संघर्ष करना पड़ा था। लेकिन उसने सफलता के राजमार्ग के रूप में स्वीकार किए जा चुके घिसे-पिटे रास्तों पर चल अपनी आश्चर्यजनक सफलता नहीं हासिल की थी, बल्कि अपना मार्ग खुद बनाया था। वह शुरू से ही जानता था कि जो रास्ता सबको पता है, उसपर चलकर तो अधिक-से-अधिक वहीं तक पहुँचा जा सकता था, जहाँ तक दूसरे लोग भी पहुँच चुके थे। इसीलिए रॉकफेलर ने उस अनजान रास्ते को चुना था, जो किसी और के साथ उसे खुद भी पता नहीं था। लेकिन उसे इतना जरूर पता था कि वह जिस मार्ग पर आगे बढ़ रहा था, वह उसे दूसरों से अलग एक विशेष मंजिल तक पहुँचाएगा। साफ है कि उसे भी अपनी अंतिम मंजिल का पता नहीं था। वह तो एक यात्री था, चलना उसका जीवन था, मंजिलें आती गईं और वह आगे चलता चला गया था, बिना थके, बिना रुके। उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य धनी बनना नहीं था, लेकिन वह धन पैदा करने के उन रास्तों को खोजने में सक्षम था, जो किसी और को पता ही नहीं था। इसीलिए वह अपने सहज भाव से जो कुछ भी करता रहा था, वह दूसरों से लिए असंभव व आश्चर्यजनक उपलब्धियाँ बन गईं। उसपर भले ही शातिर एकाधिकारवादी हथकंडे अपनाने के आरोप लगे हों, लेकिन उसने अपना काम जारी रखा था।

एंड्रयू कारनेगी—एंड्रयू कारनेगी कार्यकुशलता से अटूट प्यार करता था। जब से कारनेगी ने इस्पात उद्योग में कदम रखा था, तभी से उसने कारखानों को तकनीकी रूप से उन्नत बनाने की कोशिशें शुरू कर दी थीं। यही कारण था कि जल्द ही कारनेगी स्टील समूचे इस्पात उद्योग के लिए उदहारण बन गया था। रॉकफेलर की तरह कारनेगी में भी उचित मौके को परखने और जोखिम आकलन की अलौकिक क्षमता थी। तभी तो उसने बाजार मंदियों के दौरान बीमार इस्पात कारखानों को खरीदने का सिलसिला जारी रखा था और उन्हें अपनी प्रबंधन कुशलता से लाभकारी इकाइयों में बदल पाने में सक्षम हुआ था। जी हाँ, 19वीं सदी के अंत में एंड्रयू कारनेगी 70 प्रतिशत अमरीकी इस्पात उद्योग को नियंत्रित करने लगा था। अभी इस्पात उद्योग में लगे उसे ढाई दशक ही हुए थे।

एंड्रयू कारनेगी का जन्म 25 नवंबर, 1835 को स्कॉटलैंड के फिफे साम्राज्य में डंफर्मलीन के बेहद गरीब बुनकर परिवार में हुआ था। उसका पिता विलियम कारनेगी बुनकर था और माता मार्गरेट मॉरिसन कारनेगी घरेलू महिला थी। वे बुनकरों के लिए बनी साझी झोंपड़ी में गुजर-बसर कर रहे थे। कुछ समय बाद

बूटेदार कपड़े की भारी माँग निकली थी, जिससे अच्छी कमाई हुई थी और परिवार बेहतर इलाके में थोड़े बड़े घर में रहने लगा था। लेकिन विश्वव्यापी आर्थिक महामंदी के दौरान हथकरघा (हैंडलूम) उद्योग तबाह हो गया था, तो विलियम कारनेगी बेकार हो गया था और एंड्रयू कारनेगी की माँ को ही छोटे-मोटे काम कर परिवार का भरण-पोषण करना पड़ा था। 1840 के दशक के अंतिम वर्षों में जब संयुक्त राज्य अमरीका में एलेघेनी (पिट्सबर्ग का उत्तरी क्षेत्र, पेंसिल्वेनिया) विशेष रूप से ऊनी व सूती कपड़ों के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र के रूप में उभर रहा था। ऐसे में बेहतर कमाई की आशा में किराए के लिए कर्ज लेकर कारनेगी परिवार एलेघेनी में स्थानांतरित हो गया था। विलियम कारनेगी ने तत्काल एक कपास कारखाने (कॉटन मिल) में काम खोज लिया था और बाकी समय में बुनाई भी करने लगा था। लेकिन घर का खर्च पूरा नहीं हो पाता था, इसीलिए मार्गरेट कारनेगी ने जूते सिलने का काम शुरू कर दिया था।

अब एंड्रयू 13 साल का हो गया था और वह परिवार चलाने में माता-पिता की मदद करना चाहता था। उसे पिट्सबर्ग के कपास कारखाना (कॉटन मिल) में अरेटन (बोब्बिन) बदलने का काम मिल गया था। सप्ताह के छह दिनों में प्रतिदिन 12 घंटे काम करने के बदले 1.20 डॉलर मजदूरी मिलती थी। लेकिन वह ज्यादा कमाई की नौकरी ढूँढ़ता रहा था। 1850 में एंड्रयू को प्रति सप्ताह 2.50 डॉलर पारिश्रमिक पर ओहियो टेलीग्राफ कंपनी के पिट्सबर्ग कार्यालय में तार-संदेशवाहक (टेलीग्राफ मैसेंजर) की नौकरी मिल गई थी। उसने अपनी लगन, मेहनत व जिम्मेदार व्यवहार से कारोबारियों को प्रभावित करना शुरू कर दिया था और कइयों के साथ उसके अच्छे संबंध स्थापित कर लिये थे। इसके अलावा एंड्रयू ने लगातार अभ्यास से तारयंत्र (टेलीग्राफ मशीन) के विभिन्न ध्वनि-संकेतों के अंतर को समझने की क्षमता भी विकसित कर ली थी और वह बिना कागज-पत्रक के तार-संदेशों का अनुवाद करने लगा था। इसीलिए उसकी प्रतिभा से प्रभावित होकर अधिकारियों ने एक साल के भीतर ही एंड्रयू कारनेगी को पदोन्नत कर तारयंत्र परिचालक (टेलीग्राफ ऑपरेटर) बना दिया था।

इस बीच लौह-निर्माता (आयरन मेकर) कर्नल जेम्स एंडरसन ने एलेघेनी (पिट्सबर्ग) में कामकाजी लोगों के लिए 400 पुस्तकों वाली एक निःशुल्क पुस्तकालय की स्थापना की थी, और वह शनिवार दोपहर को खुद ही उसका संचालन भी करते थे। एंड्रयू नियमित रूप से वहाँ से पुस्तक उधार लेने लगा था, जिससे उसे अपनी बौद्धिक, आर्थिक व सामाजिक सोच विकसित करने में काफी मदद मिली और वह खुद को स्वयं निर्मित पुरुष बना पाने में सफल रहा था। वह कर्नल जेम्स एंडरसन की निस्स्वार्थ समाज-सेवा से बहुत प्रभावित हुआ था। तभी उसने मन-ही-मन ठान लिया था कि एक दिन वह जरूर इस कर्ज को उतारेगा और एंडरसन की तरह गरीब लोगों को ज्ञान हासिल करने का मौका देने के लिए पुस्तकालय खोलेगा। जी हाँ, एंड्रयू कारनेगी ने कुल

2509 पुस्तकालयों के निर्माण का कीर्तिमान स्थापित किया था। उनमें से 1689 पुस्तकालय अमरीका में, 660 यूनाइटेड किंगडम व आयरलैंड में, 125 कनाडा में और बाकी ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, न्यूजीलैंड, सर्बिया, कैरिबियन, मॉरीशस, मलेशिया व फिजी में स्थापित किए गए थे।

लेकिन उस वक्त हर समय एंड्रयू कारनेगी की नजर बेहतर आमदनीवाली नौकरी पर बनी रही थी। उसी दौरान 1853 में अपने उच्चस्तरीय संपर्कों के कारण एंड्रयू कारनेगी को पेंसिल्वेनिया रेलरोड कंपनी के पिट्सबर्ग प्रभाग के प्रमुख थॉमस अलेक्जेंडर स्कॉट (जो बाद में कंपनी अध्यक्ष भी बना) के सचिव व तारयंत्र परिचालक की नौकरी मिल गई थी। अब उसकी तनख्वाह 4 डॉलर प्रति सप्ताह हो गई थी, जो महज 18 वर्ष के युवा के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि थी। 1859 में थॉमस स्कॉट का नजदीकी होने के चलते एंड्रयू कारनेगी पेंसिल्वेनिया रेलरोड कंपनी के पिट्सबर्ग प्रभाग के तारयंत्र विभाग का अधीक्षक (सुपरिंटेंडेंट) बनने में भी कामयाब हो गया था।

1864 में कारनेगी ने पेंसिल्वेनिया के वेनंगो काउंटी स्थित ऑयल क्रीक (एलेघेनी नदी से निकली 75.2 किमी. लंबी सहायक नदी) क्षेत्र में विलियम स्टोरी फार्म में 40,000 का निवेश किया था। वहाँ पर कई तेल के कुएँ खोदे गए थे, और एक वर्ष के भीतर कारनेगी को अपने निवेश से 25 गुना, यानी 10 लाख डॉलर कमाई का मौका मिला था। इस बीच नौसेना के जलपोतों के लिए कवच, तोप, तोपगोला सहित लोहे से बने अन्य सैकड़ों औद्योगिक उत्पादों की भारी माँग निकल रही थी और पिट्सबर्ग युद्ध-उत्पादन का बड़ा केंद्र बन गया था। ऐसे में कारनेगी ने कई इस्पात बेलन कारखानों (स्टील रोलिंग मिल) व अन्य इस्पात इकाइयों में निवेश किया था और उनकी स्थापना दूसरों के साथ मिलकर काम किया था। जाहिर है कि इसके जरिए कारनेगी ने न केवल बेहतर कमाई की थी, बल्कि इस्पात उद्योग की संभावनाओं को बारीकी से परखा भी था।

गृह-युद्ध खत्म होने के बाद अमरीका में पुनर्निर्माण का युग शुरू हुआ था, जब दक्षिणी राज्यों में रेलमार्ग सहित अन्य आधारभूत ढाँचे के विकास में भारी माँग निकली थी, तो कारनेगी ने नौकरी छोड़ दी थी और खुद इस्पात उद्योग में कूद पड़ा था। 1965 में एंड्रयू कारनेगी ने पिट्सबर्ग पुल निर्माण करनेवाली कीस्टोन ब्रिज कंपनी व रेल पटरी बनानेवाली यूनियन आयरन वर्क्स की स्थापना की थी। पेंसिल्वेनिया रेलरोड की नौकरी छोड़ देने के बावजूद थॉमस स्कॉट व जॉन एडगर थॉमसन से कारनेगी की नजदीकियाँ बनी रही थीं, जिनकी मदद से वह अपनी कंपनियों के लिए बड़े-बड़े ठेके हासिल करने सफल रहा था। जाहिर है कि मदद के मुआवजे के रूप में कारनेगी ने मददगारों को अपने कारोबारों में एक निश्चित हिस्सेदारी भी दी थी। 1873 में जब अमरीकी अर्थव्यवस्था छह वर्षों के लिए मंदी

में चली गई थी, तब कारनेगी ने धीरे-धीरे घाटे में चली गई प्रतिस्पर्धी मिलों को काफी सस्ते में खरीदना शुरू कर दिया था।

लेकिन सिर्फ इसी से कारनेगी के सपने का इस्पात-साम्राज्य नहीं बन सकता था। इसके लिए इस्पात उद्योग संबंधित कच्चे माल की उत्पादन इकाइयों व उनकी आपूर्ति प्रक्रियाओं का एकीकरण व नियंत्रण जरूरी थी। कारनेगी ने ऐसा ही किया था, जिसे औद्योगिक एकीकरण की शब्दावली में ऊर्ध्वाधर एकीकरण (वर्टिकल इंटीग्रेशन) कहा जाता है। कारनेगी को ऐसा करने का मौका 1883 में मिला था, जब अमरीकी अर्थव्यवस्था एक बार फिर से मंदी की चपेट में आ गई थी। मौके का फायदा उठाकर कारनेगी ने एकीकृत लौह-इस्पात कंपनी होमस्टेड स्टील वर्क्स (मोनोंगाहेला नदी, होमस्टेड, पेंसिल्वेनिया) को खरीद लिया और कोक विनिर्माता एच.सी. फ्रिक एंड कंपनी में नियंत्रणकारी हिस्सेदारी हासिल कर ली। होमस्टेड स्टील वर्क्स में कोयला व लौह क्षेत्रों से समर्थित विशाल लौह-संयंत्र, 685 किमी. लंबी विस्तृत रेल-ढुलाई व्यवस्था व वाष्प-चालित जहाजों की शृंखला शामिल थीं। इसका नतीजा यह हुआ था कि 1880 के दशक के अंत में प्रतिदिन लगभग 2000 टन पिग आयरन उत्पादन क्षमता के साथ कारनेगी दुनिया का सबसे बड़ा पिग आयरन, इस्पात रेल व कोक निर्माता बन गया था और अमरीका के लगभग 70 प्रतिशत इस्पात उद्योग को नियंत्रित करने लगा था।

उस समय के अधिकांश सफल उद्यमियों की तरह एंड्रयू कारनेगी भी कठिन परिश्रम व लगन की बदौलत एक निहायत गरीब पृष्ठभूमि से बाहर आया था। लेकिन बेहद कम समय में आश्चर्यजनक सफलता हासिल करने के लिए कारनेगी ने क्या किया था? जी हाँ, अपनी अलौकिक व्यावसायिक सूझबूझ के अलावा कारनेगी ने भी अपने कई समकालीन पूँजीपतियों की तरह सारे एकाधिकारवादी हथकंडे अपनाए थे। वह भी शातिर व्यवसायी था, लेकिन जॉन डी. रॉकफेलर की तरह सार्वजनिक रूप से बदनाम होने से बच गया था।

बेशक, एंड्रयू कारनेगी ने चतुर व्यावसायिक कौशल व एकाधिकारवादी हथकंडों से इस्पात साम्राज्य बनाया था और खुद विश्व के सबसे बड़े धनवानों में शुमार हो गया था, लेकिन 1901 के बाद उसकी सार्वजनिक छवि में रचनात्मक परिवर्तन आया था। अपने जीवन के अंतिम 18 वर्षों के दौरान कारनेगी ने पुस्तकालयों व शैक्षिक संस्थानों के निर्माण के अलावा अन्य परोपकारी कार्यों में अपने सौभाग्य की लगभग 90 प्रतिशत संपत्ति दान कर दी थी। उनमें कारनेगी हॉल, कारनेगी मेलोन विश्वविद्यालय, कारनेगी इंस्टीट्यूशन ऑफ वाशिंगटन, कारनेगी हीरो फंड कमीशन, कारनेगी फाउंडेशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ टीचिंग, कारनेगी फाउंडेशन आदि शामिल हैं।

आम धारणा यही है कि वह पढ़ने का शौकीन था और बौद्धिकता में भरोसा रखता था, इसीलिए उसने हजारों पुस्तकालय बनवाए। लेकिन हकीकत क्या

है? उसने पुस्तकों से अधिक पुस्तकालय भवनों की विशालता व भव्यता पर क्यों जोर दिया था? इसीलिए कि उन पुस्तकालयों पर कारनेगी की मुहर लगी हुई थी। जो भी हो, एंड्रयू कारनेगी का सफलता-संघर्ष व उसकी उपलब्धियाँ आज भी उद्यमशीलता के इतिहास में एक प्रेरणादायक अध्याय हैं।

हेनरी फोर्ड—फोर्ड मोटर कंपनी के संस्थापक हेनरी फोर्ड ने मोटरवाहन (ऑटोमोबाइल) या संयोजन-शृंखला (असेंबली लाइन) का आविष्कार नहीं किया था। फोर्ड से बेहतर कई यांत्रिक अभियंता (मेकैनिकल इंजीनियर) परंपरागत कारीगरों के साथ मिलकर मोटरवाहन का निर्माण कर रहे थे। चूँकि उन मोटरवाहनों की लागत ज्यादा थी, इसीलिए उनकी कीमतें ऊँची थीं और वे सीमित ग्राहकों के बीच ही बिक पा रहे थे। लेकिन फोर्ड ने इस समस्या का समाधन बृहत् उत्पादन प्रणाली (मास प्रोडक्शन सिस्टम) विकसित कर निकाला था। इस तरीके से वह फोर्ड मॉडल टी के रूप में ऐसा पहला मोटरवाहन विनिर्मित करने में सफल रहा था, जिसकी कीमत मध्यमवर्गीय अमरीकियों की क्षमता के अनुरूप थी। इस तरह फोर्ड ने विलासी मोटरवाहन (लक्जरी ऑटोमोबाइल) को व्यावहारिक वाहन (वर्किंग व्हीकल) में बदल दिया था।

निश्चित तौर पर फोर्ड मॉडल टी 20वीं सदी में अमरीकी परिवहन उद्योग में क्रांति लाने सफल रहा था। लेकिन फोर्ड ने अपनी महत्त्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए मोटरवाहन उद्योग में कारीगरी की कलात्मक परंपरा को ध्वस्त कर दिया था और कारीगरों को विशाल उत्पादन शृंखला में कमी भी बदले जा सकनेवाले दिहाड़ी मजदूर में बदल दिया था। कहने को तो फोर्ड ने मजदूरों के वेतन भी बढ़ा दिए थे, लेकिन उसका असल इरादा मजदूर संगठनों को बेअसर कर उत्पादन को लगातार बढ़ाना और वाहन की कीमतों को घटाकर तेजी से बाजार विस्तार करना ही था। जी हाँ, इसी रणनीति से फोर्ड ने 1909-20 के सिर्फ 11 वर्षों में वाहन उत्पादन की वार्षिक क्षमता को 18 हजार से बढ़ाकर 10 लाख कर लिया था और 1921 में विश्व मोटरवाहन उत्पादन के 55 प्रतिशत पर उसका कब्जा हो गया था।

फोर्ड यही दावा करता रहा था कि वह ऐसा उपभोक्ता व मोटरवाहन उद्योग के हित में कर रहा था, लेकिन इस दौरान फोर्ड मोटर कंपनी ने जबरदस्त लाभ अर्जित किया था और वह विश्व के सबसे बड़े धनवानों व प्रसिद्ध लोगों में शामिल हो गया था। उसके बाद जब 1947 में 83 वर्ष की आयु में हेनरी फोर्ड की मृत्यु हुई थी, तो उसकी संपत्ति का मुद्रास्फीति समायोजित मूल्य 199 अरब डॉलर (रिचेस्ट.कॉम/2013) आँका गया था। लेकिन 1936 में स्थापित फोर्ड फाउंडेशन, जिसके पास 2014 में 12.40 अरब डॉलर की कुल संपत्ति थी, की बहुप्रचारित मानव कल्याणकारी गतिविधियों ने एकाधिकारवादी उद्योगपति हेनरी फोर्ड की सार्वजनिक छवि को महान् समाजसेवी और औद्योगिक

क्रांतिकारी में बदल दिया। वैसे तो हेनरी फोर्ड को जॉन डी. रॉकफेलर या एंड्रयू कारनेगी की तरह रॉबर बैरन की सूची में नहीं डाला गया था, लेकिन उसने भी अपने समकालीन पूँजीपतियों की तरह एकाधिकारवादी हथकंडों से अपना सौभाग्य हासिल किया था। फिर भी उसके जीवन का संघर्ष साबित करता है कि वह महान् स्वप्नद्रष्टा था।

हेनरी फोर्ड का जन्म मध्य-पश्चिमी अमरीका में मिशिगन प्रांत के डियरबोर्न (डेट्रायट महानगर क्षेत्र) के पास तत्कालीन ग्रीनफील्ड टाउनशिप में एक समृद्ध किसान परिवार में हुआ था। वह आयरलैंड मूल के विलियम व बेल्जियम मूल की मरियम फोर्ड की पहला जीवित रह सका बेटा था। जब हेनरी 13 वर्षों का ही था तब उसकी माँ की मृत्यु हो गई थी। उसके पिता को यही उम्मीद थी हेनरी ही अंत में परिवार की कृषि संपत्ति को सँभालेगा, लेकिन बिना माँ के उसका मन खेती-बाड़ीवाले उस माहौल से उचट गया था। हेनरी ने बाद में स्वीकार किया था कि उसे बचपन से ही खेती-बाड़ी पसंद नहीं आती थी, लेकिन वह माँ के कारण वहाँ रहता था। यही कारण था कि हेनरी 16 वर्ष की उम्र में पास के एक शहर डेट्रायट चला गया था और अगले करीब तीन वर्षों तक प्रशिक्षु के रूप में मशीन-मिस्त्री का काम सीखता रहा था। हालाँकि 1882 में वह खेती-बाड़ी में पिता का हाथ बँटाने के लिए डियरबोर्न लौट आया था, लेकिन उसका ज्यादातर वक्त खेती के लिए इस्तेमाल किए जानेवाले वेस्टिंगहाउस वाष्प इंजन को चलाने व ठीक करने में बीतता था। बाद में वेस्टिंगहाउस ने उसे भाप के इंजन के रखरखाव के काम पर रख लिया था। इस अवधि के दौरान फोर्ड ने डेट्रायट में गोल्डस्मिथ ब्रायंट एंड स्ट्रैटन बिजनेस कॉलेज में बहीखाता (बुककीपिंग) का अध्ययन भी किया था।

1888 में हेनरी फोर्ड की पास के ही एक किसान परिवार में बड़ी हुई क्लारा ब्रायंट से शादी हो गई थी। अगले कुछ वर्षों तक फोर्ड खेती-बाड़ी के अलावा लकड़ी चीरने का कारखाना (सौमिल) चलाकर अपने परिवार का भरण-पोषण करता रहा था। 1891 में वह पत्नी के साथ डेट्रॉयट चला गया था, जहाँ उसे थॉमस एडिसन द्वारा स्थापित एडिसन एल्युमिनेटिंग कंपनी में बतौर अभियंता नियुक्त कर लिया गया था। तेजी से आगे बढ़ता हुआ फोर्ड अगले दो वर्षों में वहाँ पर मुख्य अभियंता बन गया था। लगभग उसी समय क्लारा व फोर्ड दंपती का एकमात्र बेटा एड्सेल ब्रायंट फोर्ड का जन्म हुआ था। अब उसके पास धन के साथ पर्याप्त समय भी बच पा रहा था कि वह कंपनी की जिम्मेदारी निभाते हुए पेट्रोल इंजनों से संबंधित अपने निजी प्रयोगों पर भी ध्यान दे सके।

1896 में इन प्रयोगों का नतीजा निकला और फोर्ड ने एक स्वचालित वाहन (सेल्फ-प्रोपेल्ड व्हीकल) को पूरा कर लिया, जिसे उसने फोर्ड क्वाड्रीसाइकिल नाम दिया था। हल्के धातु से बने चौखटे व चार साइकिल पहियोंवाली वह फोर्ड क्वाड्रीसाइकिल एक-दो सिलेंडर व चार अश्वशक्ति (हॉर्स पावर) पेट्रोल

इंजन द्वारा संचालित होती थी। 4 जून, 1996 को फोर्ड ने फोर्ड क्वाड्रीसाइकिल की पहली टेस्ट ड्राइव थी, और बाद में कई बार चलाकर उसे बेहतर बनाने के तरीके की माथापच्ची करता रहा था। उसी वर्ष कंपनी पदाधिकारियों की बैठक में थॉमस एडिसन से पहली मुलाकात के दौरान उसे फोर्ड क्वाड्रीसाइकिल के बारे चर्चा करने का मौका मिला था। एडिसन द्वारा उस मोटरवाहन प्रयोग को मंजूरी दिए जाने व उत्साहवर्धन के बाद फोर्ड ने दूसरे वाहनों पर प्रयोग तेज कर दिए थे। 1903 से 1908 के बीच फोर्ड ने कुल सात प्रारूप (मॉडल) के वाहन तैयार किए थे, जिनकी बिक्री कुछ सौ या कुछ हजारों में हो सकी थी। उस समय प्रतिदिन कुछ वाहन तैयार हो पाते थे, क्योंकि दो या तीन कारीगरों का समूह अन्य कंपनियों से मँगाए पुरजों को संयोजित करता था।

लेकिन 1 अक्तूबर, 1908 को जब फोर्ड ने बृहत् उत्पादन प्रणाली से तैयार मॉडल टी को बाजार में उतारा था, तो उसके जनसंपर्क अधिकारियों ने यह सुनिश्चित किया था कि देश के सभी अखबारों में उसके विज्ञापन व खबरें प्रमुखता से प्रकाशित हों। बाएँ हिस्से में संचालन पहिया (स्टीयरिंग व्हील) वाली उस मोटरगाड़ी में (कार) पूरी इंजन व संचरण प्रणाली (ट्रांसमिशन सिस्टम) संलग्न थी; चार सिलेंडरों को ठोस खंड (सॉलिड ब्लॉक) में ढाला गया था; और निलंबन (सस्पेंशन) के लिए दो अर्द्ध-अंडाकार कमानियों (स्प्रिंग) का प्रयोग किया गया था। वह कार न केवल चलाने में बहुत आसान थी, बल्कि उसकी मरम्मत भी आसान व सस्ती थी। लेकिन मॉडल टी का सबसे बड़ा आकर्षण थी उसकी कीमत, जो 825 डॉलर (2015 में मुद्रास्फीति समायोजित मूल्य करीब 21,730 डॉलर के बराबर) रखी गई थी।

इसके उत्पादन के लिए फोर्ड ने संयोजन-शृंखला को 84 प्रकार के कामों में बाँट दिया था और मजदूरों को अपने स्थान पर सिर्फ वही काम करना होता था। पहले महीने में कुल 11 कारें ही तैयार हो सकी थीं, लेकिन उसमें धीरे-धीरे ज्यादा मशीनों को जोड़कर 84 कामों को लगातार आसान बनाया गया था। 1910 में जब मॉडल टी का संयोजन स्तर 12 हजार को पार कर गया था, तो फोर्ड मोटर कंपनी को हाइलैंड पार्क कॉम्प्लेक्स स्थित नई फैक्टरी में स्थानांतरित कर दिया गया था, जिसे 1978 में राष्ट्रीय ऐतिहासिक मील का पत्थर घोषित किया गया था। हाइलैंड पार्क कॉम्प्लेक्स स्थित नई संयोजन प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन किया गया था, जिससे कम-से-कम कामगार से अधिक-से-अधिक उत्पादन हासिल किया जाए।

इस तरह धीरे-धीरे सुधार के साथ 1914 तक संयोजन प्रणाली को इतना ज्यादा कार्य-सक्षम बना लिया गया था कि एक मॉडल टी कार को संयोजित करने में सिर्फ 93 मिनट लगते थे, जिस काम में पहले 12 घंटे 50 मिनट लगते थे। लेकिन बिना इधर-उधर देखे पूरे समय लगातार एक ही काम को करते रहने के कारण मजदूर की आवाजाही काफी अधिक हो गई थी। उस समय प्रतिदिन

औसतन 14000 कामगारों की जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रतिवर्ष 53,000 अधिक भरतियाँ करनी पड़ती थीं। लेकिन जब जनवरी 1914 में फोर्ड ने कामगारों का कार्यसमय 9 घंटे से घटाकर 8 घंटे और पारिश्रमिक को 2.34 डॉलर से बढ़ाकर 5 डॉलर कर दिया था, तब आवाजाही बहुत हद तक नियंत्रित हो सकी थी। इस तरह जब 1916 में फोर्ड मोटर कंपनी का वार्षिक उत्पादन 5 लाख को पार कर गया था, तो मॉडल टी की कीमत आधी से भी कम 345 डॉलर रह गई थी।

उस वक्त फोर्ड मोटर कंपनी के पास 8 करोड़ डॉलर की अतिरिक्त पूँजी इकट्ठी हो गई थी। लेकिन रूज नदी (डियरबोर्न, मिशिगन) के किनारे विश्व के सबसे बड़े फैक्टरी परिसर की महत्त्वाकांक्षी योजना को सफल बनाने, जहाँ कच्चे माल से लेकर तैयार कार तक की सारी प्रक्रिया को अंजाम दिया जा सके, फोर्ड ने अपने हिस्सेदारों को विशेष लाभांश देने के क्रम को खत्म कर दिया था। फिर 1919 में फोर्ड ने सभी मूल निवेशकों की हिस्सेदारी खरीद ली थी और अपने बेटे एस्डेल फोर्ड को अध्यक्ष बना दिया था। 1920 में जब उत्पादन स्तर 10 लाख के करीब पहुँचा था, तब उसकी कीमत 50 डॉलर से बढ़कर 395 डॉलर हो गई थी और 1921 में फोर्ड मोटर कंपनी अकेले विश्व का करीब 55 प्रतिशत कारें बना रही थी।

इस बीच 1917 में 83 फैक्टरी भवनों, एकीकृत इस्पात कारखाना, बिजली उत्पादन संयंत्र सहित आंतरिक रेलमार्ग व बंदरगाह की सुविधावाले करीब 3.84 वर्ग किमी. क्षेत्रफल में इस रूज नदी परिसर में निर्माण शुरू कर दिया गया था। लेकिन हेनरी फोर्ड के ऊर्ध्वाधर एकीकरण (वर्टिकल इंटीग्रेशन) के इस सपने को साकार होने में करीब 10 वर्ष लग गए थे। तब तक फोर्ड मोटर कंपनी कुल 1.50 करोड़ से अधिक मॉडल टी कार बेच चुकी थी और उसकी बिक्री लगातार घटती जा रही थी। इसीलिए हाइलैंड पार्क में मॉडल टी का उत्पादन बंद करने के बाद सितंबर 1927 में रूज परिसर में मॉडल ए कार उत्पादन शुरू किया गया था, जिसे दिसंबर में बाजार में उतारा गया था। अगले चार वर्षों में कुल 40 लाख मॉडल ए कारों का उत्पादन हुआ था। उसके बाद फोर्ड मोटर कंपनी ने अपनी प्रतिस्पर्धी जनरल मोटर्स की तरह हर वर्ष नए मॉडल का उत्पादन शुरू किया था।

आपका सपना ही सबकुछ करता है

आप दुनिया में किसी ऐसे सफल व्यक्ति को नहीं खोज सकते, जिसे यह पता न रहा हो कि उसे जीवन में क्या करना है। हर कोई अपने जीवन में कुछ-न-कुछ मूल्यवान् जरूर हासिल करना चाहता है, और उसके सपने उसे वह सबकुछ उपलब्ध करा देते हैं। इस तरह सपना हरेक के जीवन में दिशासूचक का काम करता है। जब तक हमें सही दिशा का ज्ञान नहीं हो जाता है, तब तक हम यह नहीं जान सकते कि वास्तव में हम प्रगति कर भी रहे हैं या नहीं। यदि आप अपने सपने के अतिरिक्त किसी दूसरी दिशा में आगे बढ़ना शुरू कर देते हैं, तो क्या

होता है? आप अपनी सफलता के लिए आवश्यक अवसर भी गँवा बैठते हैं। इसीलिए जीवन में अपने सपने की डोर को थामे रखना सबसे जरूरी होता है।

सपना हमें अपनी स्वाभाविक क्षमताओं को बढ़ाने में भी मदद करता है। सच्चाई यह है कि यदि सपना न हो तो आप अपनी क्षमताओं को देख ही नहीं पाते, क्योंकि आमतौर पर मनुष्य वर्तमान परिस्थितियों से परे देखने की कोशिश ही नहीं करता। लेकिन जब कोई सपना देखता है, तो वह स्वयं को बिल्कुल नई दृष्टि से देखने लगता है, और उसे अपने भीतर ऐसी क्षमताएँ भी नजर आने लगती हैं, जिसके बारे में उसे अब तक पता भी नहीं था। और जब आपको अपनी क्षमताएँ नजर आने लगती हैं, तो सपने को पूरा करने के लिए आप उनके विकास पर कार्य भी शुरू कर देते हैं। फिर आपके सामने आनेवाला हर अवसर, आप द्वारा खोजा गया हर साधन, आपके द्वारा विकसित हर कुशलता आपके सपने को पूरा करने की कुल क्षमता का हिस्सा बन जाती है। इसीलिए यह भी सच है कि आप जितना बड़ा सपना देखते हैं, आपकी क्षमताएँ भी उतनी ही विकसित हो जाती हैं। याद रहे कि नेत्रहीन की दुनिया उसकी स्पर्श-शक्ति तक सीमित होती है, एक अज्ञानी की दुनिया उसके ज्ञान तक सीमित होती है, जबकि व्यक्ति विशेष की दुनिया उसकी कल्पना शक्ति से सीमित होती है। साफ है कि यदि आपकी कल्पना शक्ति बड़ी है, तो आपके सपने भी बड़े होंगे और उसे पूरा करने करने लिए आप उतनी ही बड़ी क्षमताओं का विकास कर पाएँगे।

क्या कुछ नहीं करता है सपना हमारे लिए? वह ही सबकुछ करता है। वास्तव में सपना ही हमारा संचालक है। वह हमें अपनी प्राथमिकता तय करने में भी मदद देता है। कैसे? सपना हमें भविष्य के लिए आशान्वित करता है, फिर वर्तमान परिस्थितियाँ भी हमारे लिए ऊर्जा जुटाने लगती हैं, हम सपनों द्वारा निर्देशित व प्रेरित कार्य करने में जुट जाते हैं, और वही कार्य हमारी प्राथमिकता बन जाते हैं। जब आप सपना देखते हैं, तो आपको पता होता है कि उसे साकार करने के लिए क्या कुछ त्याग करना होगा। फिर आप जो भी करते हैं, उसे सपने के अनुरूप मापने के लिए भी सक्षम हो जाते हैं। इससे आप तय कर पाते हैं कि अमुक कार्य आपको अपने सपने के निकट पहुँचाने में कितनी मदद कर पा रहा है। यदि उसमें कोई कमी रहती है, तो आप उसे पूरा करने की कोशिश करते हैं, अर्थात् उस कार्य में अपना सारा ध्यान केंद्रित करते हैं। और वही प्राथमिकता हो जाती है। फिर जो कार्य आपको आपके सपने से दूर ले जाते हैं, उनसे आप अपना ध्यान हटा लेते हैं।

लेकिन विडंबना यह है कि अधिकतर लोग ठीक उल्टा करते हैं। वे एक सपने पर ध्यान केंद्रित करने की बजाय अपने सभी विकल्पों को खुला रखते हैं। ध्यान दीजिए! जब आप ऐसा करते हैं, तो कैसा महसूस करते हैं? निश्चित तौर पर आप स्वयं को हमेशा बेचैन महसूस करते हैं, क्योंकि आपके लिए निर्णय लेना मुश्किल हो जाता है। इस बारे में स्वामी विवेकानंद ने बहुत ही प्रेरणादायक

घोषणा की है, एक विचार ले लें। उस एक विचार को अपना जीवन बना लें, उसी के बारे में सोचें, उसका सपना देखें, उस विचार पर जीते रहें। मस्तिष्क, मांसपेशियों, नसों, अपने शरीर के हर अंग को उस विचार से भरने दें और हर दूसरे विचार को बस अकेला छोड़ दें।

इतना ही नहीं, सपना हमारे कार्य के महत्त्व को कई गुना बढ़ा देता है। वास्तव में हम जो कुछ भी करते हैं, हमारा सपना उसके स्वरूप व उसकी संभावना को निश्चित करता है, और उसे विशेष परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है। जब हम अपने सपने से निर्देशित-प्रेरित कार्य करते हैं, तो भले ही वह कार्य शुरू-शुरू में रोमांचक न लगे या उसका तत्काल कोई सकारात्मक परिणाम न निकले, तो भी हम उस कार्य को करते रहते हैं। क्योंकि सपना उस कार्य को स्वरूप, संभावना व परिप्रेक्ष्य प्रदान कर हमारे लिए उसके महत्त्व को बढ़ा देता है। इससे हमें यह पता चल जाता है कि अंततः यही कार्य हमें अपने सपने को पूरा करने में योगदान करनेवाला है। फिर हमारी हर कोशिश उस सपने के बड़े चित्र का हिस्सा बन जाती है।

यहाँ पर मुझे उस फकीर की कहानी याद आ रही है, जिसने भीषण गरमी में मंदिर के निर्माण में लगे मजदूरों के अलग-अलग कार्य-प्रदर्शन के कारणों को जानने की कोशिश की थी। उसने बुरी तरह परेशान एक मजदूर से पूछा था, ''तुम क्या कर रहे हो?'' उसने झुँझलाकर उत्तर दिया था, ''देख नहीं रहे हैं, मैं क्या कर रहा हूँ? मैं अपनी दिहाड़ी कमा रहा हूँ।'' उस फकीर ने वही प्रश्न किसी दूसरे मजदूर से पूछा था, तो वह गुस्से में बोला था, ''बाबाजी, आपको दिखाई नहीं देता है कि मैं सीमेंट डाल रहा हूँ।'' फिर फकीर की नजर पत्थर तराशनेवाले एक कारीगर पर पड़ी थी, जो पसीने से लथपथ था, फिर भी गुनगुनाता हुआ मस्ती में छेनी-हथौड़ी चला रहा था। फकीर बिल्कुल उसके नजदीक पहुँच गया था, तब भी वह अपने काम में मग्न था। थोड़ी देर बाद जब उस कारीगर ने पसीना पोंछने के लिए अपना हाथ रोका था, तो उसकी नजर सामने खड़े फकीर पर पड़ी थी। उसने मुसकराकर फकीर की तरफ देखा था। फिर जब फकीर ने उससे भी वही पुराना प्रश्न दोहराया था, तब उसने गर्व से कहा था, ''मैं भगवान् का मंदिर बना रहा हूँ।'' फिर उस कारीगर ने पूरे उत्साह से मंदिर के तराशे जा चुके खंभों व अपनी अन्य नक्काशियों को दिखाया था।

वास्तव में सभी अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार अपना काम कर रहे थे, लेकिन अपने कार्य के बारे में सभी का नजरिया बिल्कुल अलग-अलग था। तीसरा कारीगर अपनी कल्पनाशीलता से प्रेरित था। उसने जो भी किया था, उसमें उसका अपना सपना साकार हो रहा था, इसीलिए उसे अपने कार्य का महत्त्व भी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। तभी तो नेशनल फुटबॉल लीग/एन.एफ.एल. का पाँच बार विजेता रहा अमरीकी फुटबॉल खिलाड़ी व प्रशिक्षक (कोच) विंसेंट थॉमस विंसे लोम्बार्डी बहुत जोर देकर कहता था,

''मेरा दृढ विश्वास है कि किसी भी आदमी के सबसे बेहतरीन घंटे उसकी सबसे बहुमूल्य परिपूर्णता का वह पल होता है, जब वह अच्छे काम के लिए पूरे दिल से कार्य करता है और लड़ाई के मैदान में विजयी होकर थककर गिर पड़ता है।''

इतना ही नहीं, जब हमारे पास सपना होता है, तो हम हाथ-पर-हाथ धरे बैठकर अपने आप ही कुछ अनुकूल हो जाने की प्रतीक्षा नहीं करते हैं, बल्कि हम अपना एक-एक पल अपने जीवन को आकार देने में और उसे अर्थ प्रदान करने के लिए लगा देते हैं। हम ऐसा इसलिए करते हैं कि सपना हमारे भविष्य का पूर्वाभास भी देता है और इसी के सहारे हम स्वयं के भविष्यवक्ता भी बन जाते हैं। हमें भरोसा हो जाता है कि हम अपने कार्य में अवश्य सफल होंगे। और इससे सफलता की संभावना कई गुना बढ़ जाती है।

❑

3

सफलता में विफलता की भूमिका

वही जीत सबसे मधुर लगती है, जो सबसे मुश्किल होती है। वास्तव में जीत वही होती है, जिसके लिए आपको गहरे अंदर नीचे तक पहुँचने की आवश्यकता होती है, आपके पास जो कुछ भी है, उसके साथ लड़ना पड़ता है, बिना जाने युद्ध के मैदान में सबकुछ न्योछावर करने के लिए तैयार होना पड़ता है—करो या मरो के उस क्षण तक, जब आपका वीरतापूर्ण प्रयास पर्याप्त हो जाता है। समाज हार को पुरस्कार नहीं देता, यही कारण है कि आपको इतिहास की किताबों में अनेक असफलताएँ आलेखबद्ध की गई नहीं मिलेंगी। हाँ, ऐसी असफलताएँ जरूर अपवाद हैं, जो बाद की सफलता के लिए उन्नति का मार्ग साबित हुईं। इस तरह का मामला थॉमस अल्वा एडिसन का भी था, जिसका सबसे यादगार आविष्कार प्रकाश बल्ब था। किंवदंती है कि प्रकाश बल्ब का सफल कार्यशील मूल रूप (वर्किंग प्रोटोटाइप) विकसित करने से पहले एडिसन को 10 हजार बार परीक्षण प्रयोग (ट्रायल एक्सपेरिमेंट) करने पड़े थे। लेकिन इन विफलताओं के बारे पूछे जाने पर एडिसन ने जो कहा था, वह सफलता का महावाक्य बन गया, ''मैं असफल नहीं हुआ हूँ। मुझे तो बस 10,000 तरीके मिले हैं, जो काम नहीं करनेवाले थे।''

लेकिन विडंबना यह है कि अधिकतर लोग थॉमस एडिसन की तरह नहीं सोचते हैं और वे विफलता की परछाईं से भी दूर भागने की कोशिश करते हैं। सच तो यह है कि अधिकतर लोग विफल न होने पर अपना इतना ध्यान केंद्रित किए हुए रहते हैं कि वे सफलता पर निशाना ही नहीं साध पाते और औसत दर्जे के जीवन को अपना भाग्य मानकर उसी में स्वयं को व्यवस्थित कर लेते हैं। रोचक तथ्य यह भी है कि जब हम गलत कदम उठाते हैं, तो हम उनपर चमकदार परत चढ़ा देते हैं, एयार अपने जीवन-विवरण से गलत अनुमानों व गलतियों को चुनकर संपादित कर देते हैं। शायद आपने ने पढ़ा हो कि नासा के उड़ान-नियंत्रक (फ्लाइट कंट्रोलर) जैरी सी बोस्टिक ने क्षतिग्रस्त अपोलो-13 मिशन को पृथ्वी पर वापस लाने के दौरान कथित तौर पर कहा था, 'असफलता कोई विकल्प नहीं है।' और ऐसा लगता है मानो, तभी से यह वाक्यांश विश्व समुदाय की सामूहिक-स्मृति में खुदा हुआ लगता है।

विशिष्ट लेखन (फीचर राइटिंग) के लिए पुलित्जर पुरस्कार-2016 प्राप्त करनेवाली अमरीकी पत्रकार कथरीन शुल्ज ने अपनी पुस्तक गलत होना—त्रुटि के हाशिए में साहसिक कार्य (बीइंग रांग—एडवेंचर्स इन द मार्जिन ऑफ एरर; 2010/हार्पर कॉलिंस) में विफलता के बारे में विचारोत्तेजक तथ्य प्रस्तुत किए हैं। शुल्ज कहती हैं, हमारे सफलता-संचालित समाज में कइयों के लिए

विफलता बस गैर-विकल्प ही नहीं मानी जाती है, यह कमी समझी जाती है। उन सभी चीजों में, जिनमें हम गलत हैं, त्रुटि का विचार सूची में बहुत शीर्ष पर हो सकता है। यह हमारी सूक्ष्म गलती है, जिसका अर्थ गलत होता है, उसके बारे में हम गलत हैं। बौद्धिक हीनता की निशानी होने की बजाय भूल करने की क्षमता मानव अनुभूति के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

असल में बहुत से लोग यही सोचते हैं कि सफलता पाना बहुत सरल होता है। अपने समय में थॉमस एडिसन ने भी लोगों में यह प्रवृत्ति देखी थी। तभी उसने इसके बारे में रोचक टिप्पणी की थी, विफलता वास्तव में कल्पना से जुड़ी होती है। लोग तो परिश्रम ही नहीं करते, क्योंकि अपनी कल्पना में वे यह मान लेते हैं कि उन्हें कभी कोई परिश्रम किए बिना ही सफलता मिल गई। बहुत से लोगों का ऐसा मानना होता है कि एक दिन जब उनकी नींद खुलेगी, तो वे धनी हो गए होंगे। वास्तव में वे आधा सही होते भी हैं, क्योंकि अंत में उनकी नींद खुलती भी है। स्पष्ट है कि हर किसी को विकल्प चुनना ही पड़ता है। जो यह सोचते हैं कि वे सारी उम्र सोते रहेंगे, कुछ नहीं करेंगे, तो विफलता से बच जाएँगे, तो वे गलत हैं। बिना कुछ किए तो विफलता तय ही है। हाँ, यदि हम विफलता को सफलता की कीमत मानकर कार्य करते रहे, तो फिर सफलता का मिलना भी सुनिश्चित हो सकता है।

विफलता के आध्यात्मिक रहस्य

मैंने अपने जीवन के सबसे बड़े सबक में से एक यह सीखा था कि काम के साधनों पर अधिक ध्यान देना चाहिए, बजाय उसके अंत के। वह (रामकृष्ण परमहंस) महान् व्यक्ति थे, जिनसे मैंने यह सीखा था, और उनका स्वयं का जीवन इस महान् सिद्धांत का व्यावहारिक प्रदर्शन था। मैं उसी एक सिद्धांत से हमेशा महान् सबक सीखता रहा हूँ और मुझे लगता है कि सफलता का सारा रहस्य वहाँ पर है; अंत की तुलना में साधनों पर अधिक ध्यान देना। स्वामी विवेकानंद अपनी दूसरी विदेश-यात्रा के दौरान, 4 जनवरी, 1900 को, लॉस एंजिल्स (कैलिफोर्निया, अमरीका) में कर्म व उसका रहस्य विषय पर व्याख्यान दे रहे थे। उन्होंने आगे कहा था, ''जीवन में हमारा महान् दोष है कि हम आदर्श के प्रति इतने अधिक खिंचे हुए हैं, लक्ष्य इतना अधिक मंत्रमुग्ध करनेवाला है, इतना अधिक मनमोहक है, हमारे मानसिक क्षितिज में इतना अधिक बड़ा है कि हम दृष्टि से (लक्ष्य के) विवरण को पूरी तरह खो देते हैं।''

स्वामी विवेकानंद का मानना था कि कार्य के साधनों के प्रति पूरा ध्यान केंद्रित नहीं करने के कारण ही विफलता आती है। उन्होंने कहा था, ''जब भी विफलता आती है, यदि हम इसका गंभीर विश्लेषण करें, तो 99 प्रतिशत मामलों में हम पाएँगे कि यह इसीलिए थी, क्योंकि हमने साधनों पर ध्यान नहीं दिया था। साधनों का परिष्करण, सुदृढीकरण वह चीज है, जिसकी हमें जरूरत है। साधनों

के साथ सब ठीक है, तो अंत अवश्य आएगा। हम भूल जाते हैं कि यह कारण (उद्देश्य) है, जो प्रभाव उत्पन्न करता है; प्रभाव अपने आप नहीं आ सकता; और जब तक उद्देश्य सटीक, उचित व शक्तिशाली नहीं है, प्रभाव का उत्पादन नहीं होगा। एक बार जब आदर्श चुन लिया जाता है, और इसके साधन निर्धारित कर लिये जाते हैं, तो हम आदर्श को लगभग छोड़ भी सकते हैं, क्योंकि हम सुनिश्चित होते हैं कि जब साधन सिद्ध हैं, तो यह वहाँ होगा। जब कारण वहाँ था, तो प्रभाव के बारे में कोई कठिनाई नहीं है, प्रभाव आने के लिए बाध्य है। यदि हम कारण की देखभाल करते हैं, तो प्रभाव खुद का खयाल रख लेगा। आदर्श की अनुभूति प्रभाव होता है। कारण साधन हैं, इसलिए साधनों के प्रति ध्यान जीवन का महान् रहस्य है।''

यही बात हम श्रीमद्भगवद्गीता में भी पढ़ते हैं और सीखते हैं कि हमें कर्म करना, अपनी पूरी क्षमता के साथ लगातार कर्म; हम चाहे जो कुछ भी कर रहे हैं, हमें अपना पूरा मस्तिष्क काम में लगाना चाहिए। साथ-ही-साथ हमें निश्चित रूप से उससे चिपकना नहीं चाहिए। कहने का भाव यह है, हमें कुछ और के द्वारा काम से दूर नहीं खींचा जाना चाहिए; फिर हम कभी भी चाहें, हमें काम छोड़ देने में सक्षम होना चाहिए।

विवेकानंद ने आगे कहा था, ''यदि हम अपने स्वयं के जीवन की जाँच करें, तो हम पाते हैं कि दुःख का सबसे बड़ा कारण यह है कि हम कुछ हाथ में लेते हैं, और उसपर अपनी पूरी ऊर्जा लगा देते हैं, संभवतः यही विफलता है और फिर भी हम इसे त्याग नहीं पाते। हम जानते हैं कि यह हमें चोट पहुँचा रहा है कि इसके साथ कुछ देर आगे भी चिपटे रहना अपने ऊपर बस दुःख को लाना है; फिर भी हम अपने आप इससे नाता तोड़ नहीं सकते हैं। मधुमक्खी मधु चूसने के लिए आई थी, लेकिन उसके पैर मधु-कलश से चिपक गए थे, और वह दूर नहीं जा सकी। बार-बार हम स्वयं को वैसी ही अवस्था में पाते हैं। यही अस्तित्व का पूरा रहस्य है। हम यहाँ क्यों हैं! हम यहाँ मधुपान करने आए थे और हम अपने हाथ व पैर उससे चिपके हुए पाते हैं। हम पकड़े जाते हैं, हालाँकि हम पकड़ने आए थे। हम आनंद लेने आए थे; हमारा आनंद लिया जा रहा है। हम शासन करने आए थे; हम शासित हो रहे हैं। हम काम करने आए थे; हमारा ही काम किया जा रहा है। हर समय हम ऐसा पाते हैं। और यह हमारे जीवन के हरेक विवरण में आता है। हम पर दूसरे मस्तिष्कों द्वारा काम किया जा रहा है और हम हमेशा दूसरे के मस्तिष्कों पर काम करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हम जीवन के सुखों का आनंद लेना चाहते हैं; और वे हमारी जीवनाधाराओं को ही खा रहे हैं। हम प्रकृति से सबकुछ प्राप्त करना चाहते हैं, लेकिन हम लंबे समय में पाते हैं कि प्रकृति हमसे सबकुछ ले लेती है, हमें क्षीण करती है और हमें एक तरफ डाल देती है।''

स्वामीजी अमरीका के तथाकथित उन संभ्रांत व आधुनिक नागरिकों के बीच जीवन के रहस्य से परदा उठा रहे हैं, जो भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के सबसे बड़े

जुनूनियों में गिने जाने थे। पहली बार कोई उनके सामने इन आसान शब्दों में इतनी सूक्ष्म बातों को स्पष्ट कर रहा था। वे मानो कानों के साथ-साथ अपनी आँखों से भी उस युवा योगी के दिव्य वचनों से अपनी बेचैन आत्मा को तृप्त कर रहे थे। स्वामी विवेकानंद ने उनकी दुःखती नब्ज पर हाथ रख दिया था, ऐसा नहीं होता रहा होता, तो जीवन सूरज के प्रकाश से भर गया होता। कोई बात नहीं! अपनी सभी विफलताओं व सफलताओं के साथ, अपने सभी सुखों व दुःखों के साथ, यह सूरज के प्रकाश का उत्तराधिकारी हो सकता है, यदि हम केवल पकड़े न जाते।

ध्यान दीजिए, स्वामी विवेकानंद की गूढ़ बातों पर, वह 116 वर्ष पहले, अमरीका में यह सब बोल रहे थे। क्या हम आज ऐसी स्थितियों में फँसे हुए नहीं हैं? क्या अमरीकी पूँजीवाद का अंधानुकरण करते हुए हम लोग भी अपने जीवन के मूल उद्देश्य से दूर नहीं चले गए हैं? स्वामीजी आगे बोलते हैं, वह एक कारण है दुःख का—हम जुड़े हुए हैं, हमें पकड़ा जा रहा है। इसीलिए गीता कहती है—लगातार काम करो; कर्म करो, लेकिन जुड़ो मत; पकड़े मत जाओ। सबकुछ से अपने आपको अलग करने की शक्ति से स्वयं को बचाकर रखो, प्रिय हो तो भी आत्मा उसके लिए जितनी भी तरसती हो तो भी यदि तुम इसे छोड़ने के लिए जा रहे हो तो दुःख, जितना भी बड़ा कष्ट तुम महसूस करो; फिर भी जब भी तुम चाहते हो, इसे छोड़ने की शक्ति आरक्षित रखो। और इसी के साथ स्वामी ने मानव जाति को स्वयं को मुक्त करने का अमर संदेश सुनाया था, कमजोर के पास यहाँ कोई जगह नहीं है, इस जीवन में या किसी अन्य के जीवन में। कमजोरी गुलामी की ओर ले जाती है। कमजोरी सभी प्रकार के दुःख —शारीरिक व मानसिक—की ओर ले जाती है। कमजोरी मृत्यु है। हमारे आस-पास हजारों रोगाणु हैं, लेकिन वे हमें नुकसान नहीं पहुँचा सकते, जब तक कि हम कमजोर न हो जाते हों, जब तक शरीर इसके लिए तैयार न हो जाता हो और उन्हें प्राप्त करने के लिए अधिक संवेदनशील न हो जाता हो।

स्वामीजी ने इस जटिल गुत्थी को इस इस तरह से सुलझाया था, आसक्ति (जुड़ाव) अभी हमारे सभी प्रकार के सुखों का स्रोत है। हम अपने मित्रों से, संबंधियों से जुड़े होते हैं; हम अपने बौद्धिक व आध्यात्मिक कार्यों से जुड़े होते हैं; हम बाहरी वस्तुओं से जुड़े होते हैं, इसलिए कि हमें उनसे सुख मिलता है। फिर इस जुड़ाव (आसक्ति) के अलावा और क्या है, जो दुःख को लाता है? हमें आनंद अर्जित करने के लिए अपने आपको अलग (विरक्त) करना है। यदि हमारे पास केवल अपनी इच्छा से स्वयं को अलग करने की शक्ति रही होती, तो कोई दुःख नहीं होता। अकेला वही आदमी प्रकृति का सर्वोत्तम प्राप्त करने में सक्षम हो जाएगा, जो अपनी पूरी ऊर्जा के साथ किसी एक चीज के साथ स्वयं को जोड़ने (आसक्त) की शक्ति रखते हुए स्वयं को अलग (विरक्त) करने की शक्ति रखता हो, जब उसे ऐसा करना चाहिए।

स्वामीजी बहुत बारीकी से जानते थे कि जनसाधारण के लिए ऐसा करना आसान नहीं होता है। इसीलिए उन्होंने सभी को सावधान भी किया था, कठिनाई यह है कि जितनी अधिक जुड़ाव (आसक्ति) की शक्ति होनी चाहिए, उतनी ही अलगाव (अनासक्ति) की। ऐसे लोग हैं, जो किसी भी चीज से कभी आकर्षित नहीं रहे हैं। वे कभी भी प्यार नहीं कर सकते हैं, वे कठोर हृदय व निरुत्साही हैं; वे जीवन के अधिकांश दुःखों से बच जाते हैं। लेकिन दीवार कभी भी दुःख को महसूस नहीं करती है, दीवार कभी भी प्यार नहीं करती है, कभी भी आहत नहीं होती; आखिरकार यह दीवार होती है। निश्चित रूप से दीवार होने की तुलना में आसक्त (जुड़ा हुआ) होना व पकड़े जाना बेहतर है। इसलिए जो आदमी कभी भी प्यार नहीं करता है, कठोर व पथरीला होता है, जीवन के अधिकांश दुःखों से बच जाता है, उसकी खुशियों से बच जाता है। हम ऐसा नहीं चाहते हैं। वह कमजोरी है, वह मृत्यु है। वह आत्मा जाग्रत् नहीं की गई है, जो कभी भी कमजोरी महसूस नहीं करती, कभी भी दुःख नहीं महसूस करती। यह बेदर्द अवस्था है। हम वह नहीं चाहते।

अब स्वामी विवेकानंद मानव की महान् चाहत, पराक्रमी शक्ति व देवताओं से भी ऊँचा हो जाने की संभावनाओं का उल्लेख करते हैं। वह कहते हैं, ''एक ही समय पर हम न केवल प्यार की यह पराक्रमी शक्ति चाहते हैं, आसक्ति की पराक्रमी शक्ति चाहते हैं, एक ही वस्तु के ऊपर अपनी समूची आत्मा न्योछावर कर देने, दूसरी आत्माओं के लिए अपने आपको खो देने व अपने आपको विलोपित हो जाने की शक्ति, जैसा कि यह थी—जो कि देवताओं की शक्ति है, बल्कि हम यहाँ तक कि देवताओं से भी ऊँचा होना चाहते हैं। सिद्ध पुरुष अपनी पूरी आत्मा प्यार के उस एक बिंदु के ऊपर डाल सकता है, फिर भी वह अनासक्त रहता है।''

आखिर यह सिद्धि कैसे आती है? क्या हर व्यक्ति इस सिद्धि को हासिल कर सकता है? हाँ, लेकिन इसे सीखने का एक और रहस्य है। स्वामी विवेकानंद ने उस रहस्य से इस प्रकार परदा हटाया था, भिखारी कभी भी खुश नहीं होता है। भिखारी केवल खैरात पाता है, इसके पीछे दया व घृणा के साथ, उसके पीछे कम-से-कम इस विचार के साथ कि भिखारी निम्न वस्तु है। जो उसे मिलता है, वह वास्तव में कभी भी आनंद नहीं लेता है। अब जिस तथ्य को विवेकानंद उजागर करनेवाले हैं, वह भले ही क्रूरतम लगता हो, लेकिन यही हमारे जीवन व हमारे अस्तित्व का सत्य है। स्वामीजी कहते हैं, ''हम सभी भिखारी हैं। हम जो भी करते हैं, हम वापसी चाहते हैं। हम सभी व्यापारी हैं। हम जीवन में व्यापारी हैं, हम सदाचार में व्यापारी हैं, हम पंथ में व्यापारी हैं। और अफसोस! हम प्यार में भी व्यापारी हैं।''

ऐसे कड़वे वचन स्वामी विवेकानंद ही बोल सकते थे और वे ऐसा इसलिए बोल रहे थे कि वे मनुष्य की महानता के पैरोकार थे, किसी को भी भिखारी के

रूप में देख नहीं सकते थे। उन्होंने अपने उस विचारोत्तेजक व्याख्यान में आगे कहा था, ''यदि आप व्यापार करने के लिए आते हैं, यदि यह देने व लेने का प्रश्न है, यदि यह खरीदने व बेचने का प्रश्न है, तो खरीदने व बेचने के कानूनों का पालन करें। बुरा समय होता है और अच्छा समय है; कीमतों में वृद्धि व गिरावट होती है; हमेशा आप झटका आने की उम्मीद करते हैं। यह दर्पण को देखने जैसा है, आपका चेहरा प्रतिबिंबित होता है, आप मुँह बनाते हैं। दर्पण एक होता है; आप हँसते, दर्पण हँसता है। यह खरीदना व बेचना है, देना व लेना है।''

आप विवेकानंद के तर्कों से भाग नहीं सकते, वह आपको कस के पकड़े रखते हैं, जब तक कि आपमें सत्य को उतार न दें। यह बात अलग है कि वह हम कहकर हम सबके साथ स्वयं को भी जोड़कर देखते हैं। वह आगे कहते हैं, ''हम पकड़ लिये जाते हैं। कैसे? हम जो देते हैं, उसके द्वारा नहीं, बल्कि उसके द्वारा, जिसकी हम उम्मीद करते हैं। हम अपने प्यार की वापसी में दुःख पाते हैं; इस तथ्य से नहीं कि हम प्यार करते हैं, बल्कि इस तथ्य से कि हम वापसी में प्यार चाहते हैं। जहाँ चाहना नहीं है, वहाँ दुःख नहीं है। इच्छा, चाहना सभी प्रकार के दुःख के जनक हैं।'' इच्छाएँ सफलता व विफलता के कानूनों से बँधी हैं। इच्छाएँ दुःख को अवश्य लाती हैं। तो फिर संसारी मनुष्य क्या करे? विवेकानंद इस महान् रहस्य से परदा उठाते हैं, तब सच्ची सफलता का, सच्ची खुशी का महान् रहस्य यह है—वह आदमी, जो वापसी के लिए नहीं पूछता है, पूरी तरह से निस्स्वार्थी आदमी सबसे सफल है। यह विरोधाभास प्रतीत हो रहा है। क्या आप नहीं जानते हैं कि हरेक आदमी, जो निस्स्वार्थी है, जीवन में ठगा जाता है, आहत किया जाता है? प्रत्यक्ष रूप से, हाँ। ईसामसीह निस्स्वार्थी थे और फिर भी वह क्रूस पर चढ़ाए गए थे। यह सच है, लेकिन हम जानते हैं कि उनका निस्स्वार्थीपन कारण, महान् जीत का उद्देश्य है, सच्ची सफलता के आशीर्वाद के साथ लाखोलाख जीवनों की ताजपोशी का।

विवेकानंद कभी भी आपको मँझधार में नहीं छोड़ते, हमेशा हमारी बाँह पकड़े रखते हैं; इसीलिए अपनी बातों को और अधिक स्पष्ट करते हैं, कुछ भी नहीं पूछें; बदले में कुछ भी नहीं चाहें। दें, जो आपके पास देने को है; यह आपके पास वापस आएगा, लेकिन उसके बारे में अभी न सोचें, यह हजार गुना वापस आ जाएगा, लेकिन आवश्यक रूप से ध्यान उसपर नहीं होना चाहिए। फिर भी देने की शक्ति रखें, दें और यह वहाँ समाप्त हो जाता है। सीखें कि समूचा जीवन ही देना है, प्रकृति देने के लिए आपको मजबूर कर देगी। तो स्वेच्छा से दें। जल्दी या बाद में आपको समर्पण करना ही पड़ेगा। आप जीवन में जमा करने के लिए आ जाते हैं। बँधे हुए हाथों के साथ आप लेना चाहते हैं। लेकिन प्रकृति आपके गले पर हाथ डाल देती है और आपके हाथों को खुला बना देती है।

स्वामी विवेकानंद ने जो कर्म का रहस्य बताया है, वह भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिए गए इस कर्मयोग ज्ञान पर ही आधारित है—कर्मण्ये

वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूः मांते संङगोस्त्वकर्मणि। (श्रीमद्भगवद्गीताः अध्याय-2, श्लोक 47) अर्थात् तुम्हारे पास केवल कर्म का अधिकार है, लेकिन उसके फल पर कोई अधिकार नहीं है। कर्म करने में फल का उद्देश्य मत आने दो, अपने आपको अकर्मण्यता से न जुड़ने दो। बहुत स्पष्ट है कि विफलता आती ही तभी है, जब हम फल की अपेक्षा से कार्य करते हैं। यदि आप अपने जीवन का मूल उद्देश्य पहचान चुके हैं, लगातार अपनी क्षमता का विकास करते हुए अपने मुख्य सपने की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं, यानी कर्म कर रहे हैं, तो विफलता व सफलता का प्रश्न कहाँ उठता है! आप तो बस यात्रा कर रहे हैं। जिन्हें लोग विफलता कहते हैं, वे असल में यात्रा की बाधाएँ हैं, और जिन्हें लोग सफलता मानते हैं, वे आपके द्वारा तय की गई यात्रा के मील के पत्थर हैं। सफलता सापेक्ष शब्द है, बस पहले की अपेक्षा अब तक की तुलना, और यह भी स्वयं के जीवन-यात्रा पर आगे बढ़ते रहने का तात्कालिक आकलन मात्र है, आपका अंतिम गंतव्य नहीं। शुरू-शुरू में जीवन का मूल उद्देश्य हमारा मार्गदर्शन जरूर करता है, लेकिन बाद में इसका बोध भी खत्म हो जाता है, हमारा कर्म व उद्देश्य एकाकार हो जाता है, फल की चिंता किए बिना हमारा पूरा ध्यान अपने कर्म पर केंद्रित हो जाता है और हम कर्मयोगी बन जाते हैं।

विफलता इतनी महत्त्वपूर्ण क्यों है?

विफलता चाहे यह कितना भी दर्द दे, जीवन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा होती है। वास्तव में विफलता आवश्यक है। इस संसार में संभवतः कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जिसने विफलता का सामना न किया हो। मैं उन विफलताओं की भी बात कर रहा हूँ, जो कई लोगों की दुनिया ही तबाह कर देती हैं और सबंध, वित्त व मानसिक शांति के परिदृश्य को ही पूरी तरह से बदलकर रख देती हैं। यदि यह सच है कि विफलता किसी को भी आनंद नहीं देती, तो यह भी उतना ही बड़ा सच है कि विफलता जीवन को बदल देनेवाले सबक सिखाती है, और हमें पहले से अधिक अच्छे व्यक्ति बनाती है। इस तरह विफलता जीवन का महान् शिक्षक है; यह प्रकृति की छेनी है, जो दिव्य प्रयोजन से मनुष्य को ढालने व आकार देने के क्रम में उसकी सभी प्रकार की अधिकताओं व अहं को छीलकर हटा देती है। हरेक व्यक्ति विफलता के माध्यम से जीवन के महान् सबक सीखता है।

हालाँकि हम लोग विफलता के आध्यात्मिक रहस्य को पढ़ चुके हैं, फिर भी मैं दोहराता हूँ कि विफलता क्या है? किसी भी उद्देश्य में सफल होने से पहले हमारे लिए विफल होना इतना जरूरी क्यों होता है? इस विषय पर आगे बढ़ने से पहले मैं आपको कुछ विश्वविख्यात लोगों की विफलताओं के बारे में संक्षिप्त जानकारियाँ देना चाहता हूँ। इससे आपको विफलता की मूल प्रकृति के बारे में

जानने का अवसर मिलेगा। यह क्या है और यह कैसे हमारे जीवन को प्रभावित करती है? यह कैसे हमारे विचारों, भावनाओं व कार्यों को प्रभावित करती है?

जेम्स यूजीन जिम कैरी—सभी जानते हैं कि 1990 के दशक में द मास्क, डंब एंड डंबर व ऐस वेंचर्स जैसी सर्वाधिक कमाई करनेवाली सभी समय की हास्य फिल्मों के साथ कनाडा मूल का अमरीकी हास्य अभिनेता, पटकथा लेखक व निर्माता जिम कैरी उभरकर सामने आया था। लेकिन कैरी के संघर्ष के बारे में सभी नहीं जानते। उसका जन्म निम्न आयवाले परिवार में हुआ था और उसका पिता नौकरी बचाने का संघर्ष करता रहा था। परिवार की आर्थिक हालत इतनी पतली थी कि 15 वर्ष की आयु में कैरी को उच्च विद्यालय की पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी थी और परिवार की मदद के लिए चौकीदार के रूप में नौकरी करनी पड़ी थी।

टोरंटो के एक क्लब में जब वह पहली बार हास्य कलाकार के रूप में प्रस्तुत हुआ था, तो दर्शकों की धिक्कार के कारण उसे मंच से उतर जाना पड़ा था। बाद में जब उसने 1980-81 के दूरदर्शन कार्यक्रम सैटरडे नाइट लाइव का श्रवण-शक्ति परीक्षण (ऑडिशन टेस्ट) दिया था, तो उसे किसी भी भूमिका के लिए नहीं चुना गया था। बाद में उसने ओपरा विनफ्रे के साथ साक्षात्कार में बताया था कि वह किस तरह आकर्षण के कानून का उपयोग करते हुए स्वयं के नाम से 10 लाख डॉलर का चेक लिखकर अपने बटुए में अगले सात वर्षों तक रखा हुआ था, जब डंब एंड डंबर में उसकी भूमिका के लिए उसे 10 लाख डॉलर का भुगतान मिला था।

कैटी पेरी—अमरीकी गायिका व गीतकार कैथरिन एलिजाबेथ हडसन अपने पेशेवर नाम कैटी पेरी से जानी जाती है। सभी जानते हैं कि वह 2008 में अपने समलैंगिक प्रसंगों के कारण विवादास्पद संगीत संग्रह 'आई किस्ड ए गर्ल' के साथ उभरकर सामने आई थी और देखते-देखते समय के सर्वाधिक बिकनेवाली संगीत कलाकारों की सूची में शामिल हो गई थी। लेकिन बहुत कम लोग जानते हैं कि उसने किशोरावस्था से गिरिजाघरों में सुसमाचार संगीत (गॉस्पेल म्यूजिक) गाना शुरू कर दिया था। 11वीं के बाद 1999 में ही गायन पेशा में अपना पूरा ध्यान केंद्रित करने के लिए उसने पढ़ाई छोड़ दी थी। 2001 में कैटी ने रेड हिल रिकार्ड्स के साथ अपना पहला सुसमाचार संगीत संग्रह जारी किया था। उस संग्रह की अभी 200 प्रतियाँ ही बिकी थीं कि उस रिकॉर्ड कंपनी ने अपना कारोबार बंद कर दिया था।

उसके बाद कैटी ने लोकप्रिय संगीत का दामन थामने का फैसला किया था। वह लॉस एंजिल्स स्थानांतरित हो गई थी और संगीत निर्माताओं—ग्लेन बेलार्ड, डॉ. ल्यूक व मैक्स मार्टिन के साथ काम करना शुरू कर दिया था। उसने 2003 में द आइलैंड डेफ जाम म्यूजिक ग्रुप के साथ अनुबंध किया था, जो साल भर के भीतर ही टूट गया था। उसके बाद 2004 में कोलंबिया रिकार्ड्स ने कैटी के

साथ द मैट्रिक्स बैंड के प्रमुख गायिका के रूप में अनुबंध किया था, लेकिन 80 प्रतिशत काम पूरा हो जाने के बाद कंपनी ने उस परियोजना को ही बंद कर दिया था। जरा कल्पना कीजिए, लगातर तीन संगीत निर्माता कंपनियों से अनुबंध टूटने के बाद कैटी पेरी को अपना पेशेवर भविष्य कैसा नजर आ रहा होगा? लेकिन वह हार माननेवालों में से नहीं थी। छोटे-मोटे काम करती हुई और सहयोगी गायिका में प्रस्तुति देती हुई, उसने अपने संगीत पेशे को तब तक आगे बढ़ाना जारी रखा, जब तक अप्रैल 2007 में कैपिटोल म्यूजिक ग्रुप ने उसके अनुबंध नहीं किया था। अगले एक वर्ष तक कैटी 'आई किस्ड ए गर्ल' एकल गीत रचना पर काम करती रही थी। 28 अप्रैल, 2008 को गीत जारी किए जाने बाद कैटी की व्यावसायिक सफलता का ऐतिहासिक दौर शुरू हो सका था।

ओपरा गेल विनफ्रे—द ओपरा विनफ्रे शो की ऐतिहासिक सफलता से प्रसिद्ध हुइ दूरदर्शन सूत्रधार (टी.वी. होस्ट) ओपरा गेल विनफ्रे को सभी जानते हैं। लेकिन वह किन हालातों से जूझती हुई वहाँ तक पहुँच सकी थी, बहुत कम लोग जानते हैं। उसने बहुत ही संघर्षपूर्ण जीवन-यात्रा शुरू की थी। आर्थिक बदहाली की तो बात ही न करें, ओपरा को नौ वर्ष की उम्र से अपने निकट संबंधियों के यौन दुर्व्यवहार का शिकार होना पड़ा था। वह 14 वर्ष की आयु में गर्भवती हो गई थी, लेकिन उसका बेटा जन्म के कुछ समय बाद ही मर गया था। यह भी ईश्वर की कृपा ही थी कि उसकी माँ को कब का छोड़ चुके पिता ने ओपरा को अपना लिया था और फिर से पढ़ाई शुरू करने के लिए प्रेरित किया था। भावनात्मक रूप से पूरी तरह टूट चुकी ओपरा के लिए यह सब आसान नहीं था, लेकिन उसकी जीने की ललक अभी खत्म नहीं हुई थी। वह पढ़ाई के साथ-साथ स्थानीय निजी आकाशवाणी केंद्र (रेडियो स्टेशन) में काम करती रही थी।

लेकिन उसकी पेशेवर चुनौती तब शुरू हुई थी, जब स्थानीय निजी दूरदर्शन में समाचार वाचिका (न्यूज रीडर) के रूप में काम शुरू किया था। कार्यक्रम निर्माता ने उसे दूरदर्शन के लिए अयोग्य कर बाहर निकाल दिया था। वह भी हार माननेवालों में से नहीं थी। उसने बाल्टीमोर में दूसरे दूरदर्शन केंद्र में 'पीपल आर टॉकिंग' नामक कार्यक्रम शुरू किया था। 1983 में शिकागो के एक निजी दूरदर्शन केंद्र ने अपने सबसे कम लोकप्रिय आधे घंटे के प्रातःकालीन बातचीत कार्यक्रम (टॉक शो) 'ए.एम. शिकागो' को प्रस्तुत करने के लिए ओपरा को नियुक्त कर लिया था, जो उसके लिए कपट-भेस में कृपादान (ब्लेसिंग इन डिस्गाइज) साबित हुआ था। कुछ ही महीनों में इस कार्यक्रम ने शिकागो के सबसे अधिक लोकप्रिय 'द फिल डोना हुए' शो को पीछे छोड़ दिया था और ओपरा की ऐतिहासिक सफलता-यात्रा शुरू हो सकी थी।

जे. जेड—21 ग्रैमी पुरस्कार जीतनेवाले अमरीकी रैप गायक शॉन कोरी कार्टर, जिसका पेशेवर नाम 'जे.' सभी जानते हैं। उसमें बचपन से ही ताल की स्वाभाविक कुशलता थी। लेकिन उसे रातोरात प्रसिद्धि नहीं मिली, अंतिम

सफलता तक पहुँचने के लिए उसे भी मार्ग की कई बधाओं का सामना करना पड़ा था।

25 जून, 1996 को उसने अपना पहला संगीत संग्रह 'रिजनेबल डाउट' जारी किया था, जिसे 7 फरवरी, 2002 को अमरीका में 10 लाख प्रतियों की बिक्री के लिए रिकॉर्डिंग इंडस्ट्री एसोसिएशन ऑफ अमरीका (आर.आई.ए.ए.) द्वारा प्लेटिनम प्रमाणित किया गया था। पहला संगीत संग्रह सफल होने के बाद भी जे. जेड के लिए आगे का रास्ता बहुत आसान नहीं रहा था, बल्कि उसे भयंकर प्रतिरोध का सामना करना पड़ा था। अभी वह अपने पेशेवर जीवन के शुरुआती उठान पर था कि 1 दिसंबर, 1999 को उसपर टाइम्स स्क्वायर (न्यूयॉर्क सिटी) स्थित किसी क्लब में आयोजित एक संगीत संग्रह विमोचन समारोह में कथित तौर पर किसी को छुरा घोंपने का आरोप लगा दिया गया था। उसके खिलाफ मुकदमा चलाया गया था, उसे छुरा मारने के मुख्य आरोप से तो मुक्त कर दिया गया था, लेकिन उसे कम आपराधिक कदाचार के लिए तीन वर्षों की परिवीक्षा (प्रोबेशन) स्वीकार करनी पड़ी थी।

जी हाँ, जे. जेड ने बचपन से ही घोर संघर्ष किया था। वह ब्रुकलिन (न्यूयॉर्क) की पिछड़ी आप्रवासी बस्ती में पैदा हुआ था। उसके पिता ने उसकी माता को चार बच्चों के साथ अकेला छोड़ दिया था। जे. जेड ने भीषण गरीबी झेली थी, कदम-कदम पर अवरोधों से मुकाबला किया था। लेकिन कभी हार नहीं मानी थी, चाहे उसके साथ जो भी हुआ हो, चाहे जितनी असफलताएँ आई हों, वह सभी का मुकाबला करता रहा और पहले से बेहतर व्यक्ति बनने की कोशिश करता गया था और अंततः अपने जीवन के मूल उद्देश्य को हासिल करने में सफल रहा था।

जोआन कैथलीन (जे.के.) रॉलिंग—रॉलिंग की ऐतिहासिक सफलता हमारे युग की सबसे प्रेरणादायक कहानियों में से एक है। कई लोग उसे बस 'हैरी पॉटर' पुस्तक शृंखला की रचनाकार महिला के रूप में जानते हैं। लेकिन अधिकतर लोग नहीं जानते हैं कि विश्वविख्यात लेखिका बनने से पहले उसे किन कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा था। 1990 में रॉलिंग को 'हैरी पॉटर' पुस्तक लिखने का विचार कौंधा था। एक दिन जब वह रेलगाड़ी में मेनचेस्टर से लंदन जा रही थी, तब वह विचार पूर्णरूपेण आकार ग्रहण कर गया था। उसके बाद उसने दिन-रात पूरे आवेग के साथ लिखना शुरू कर दिया था। लेकिन उसी वर्ष बाद में उसकी माँ का बहुविध ऊत्तक दृढन (मल्टीपल स्केलेरोसिस) की जटिलताओं के बाद निधन हो गया था।

1992 में रॉलिंग अंग्रेजी पढ़ाने के लिए पुर्तगाल चली गई थी। वहाँ उसकी स्थानीय दूरदर्शन पत्रकार से मुलाकात हुई थी, उसने शादी कर ली थी और बेटी को भी जन्म दिया था। लेकिन 1993 में विवाह-विच्छेद हो गया और वह अपनी बेटी के साथ एडिनबर्ग (स्कॉटलैंड) आ गई थी, जहाँ पास में उसकी बहन भी

रहती थी। उस समय उसके पास 'हैरी पॉटर' के बस तीन संपूर्ण अध्याय ही थे। वह बेरोजगार थी, तलाकशुदा थी, उसके पास में फूटी कौड़ी भी नहीं थी और ऊपर से आश्रित बेटी की माँ भी थी। ऐसी हालत में उस समय रॉलिंग खुद को असफल के रूप में देखने लगी थी। अब अवसाद (डिप्रेशन) के झटके तो लगे ही थे, उसके मन में आत्महत्या के विचार भी आने लगे थे। और अंततः उसे सरकारी कल्याण की सहायता माँगने के लिए मजबूर होना पड़ा था। यह उसके लिए बहुत बुरा समय था, लेकिन उसने उसे भी पास कर लिया था।

1995 में सभी 12 प्रमुख प्रकाशकों ने 'हैरी पॉटर' की पांडुलिपि को खारिज कर दिया था। लेकिन यह वही वर्ष था, जब एक छोटे प्रकाशन गृह ब्लूम्स्बुरी ने उस पुस्तक को स्वीकार कर लिया था था, अग्रिम राशि के रूप में 1500 पौंड बढ़ाया था। 1997 में उस पुस्तक की सिर्फ 1000 प्रतियाँ छपी थीं, जिनमें से 500 पुस्तकालयों में वितरित की गई थीं। 1997 में उस पुस्तक को 'नेसले स्मार्टीज बुक प्राइज' व 1998 में वर्ष की बाल-पुस्तक का 'ब्रिटिश बुक अवॉर्ड' मिला था। फिर तो मानो रॉलिंग के नाम की धूम ही मच गई थी। 2013 तक 'हैरी पॉटर' शृंखला की 50 करोड़ से अधिक पुस्तकें बिक चुकी थीं और अगस्त 2015 में हैरी पॉटर का सकल मूल्य 15 अरब डॉलर आँका गया था।

भारी संघर्ष के बाद ऐतिहासिक सफलताएँ हासिल करनेवालों की सूची बहुत लंबी है। आप किसी भी सफल व्यक्ति के जीवन में झाँके, तो आपको इस तरह की कहानियाँ मिल जाएँगी। हमारी सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि जब भी हम विफलता के बारे में सोचते हैं, तो हम चीजों को नकारात्मक दृष्टिकोण से देखने लगते हैं। हम कहते हैं कि विफलता दर्दनाक होती है, यह भावनात्मक अशांति व परेशानी का कारण बनती है, और अपराध-बोध, खेद व पश्चात्ताप का पीड़ादायक कष्ट थोपती है। लेकिन जिन लोगों ने सच्ची विफलता को जाना है और उससे बाहर निकलकर फिर से उछले हैं, वे समझते हैं कि जीवन में विफलता सफलता के लिए आवश्यक है। यह सच है कि विफलता दर्द देती है। वास्तव में कई बार ऐसी मर्मांतक चोट भी पहुँचाती है कि लोग उसे झेल भी नहीं पाते। फिर भी यह बहुत आवश्यक है। और जीवन में सबसे सफल लोग सबसे अधिक बार विफल रहे हैं। यदि आप किसी भी काम में असफल हुए बिना ही जीवन गुजारते जाने की कोशिश करते हैं, तो आप वास्तव में बिल्कुल भी जीवन नहीं जी रहे हैं।

जोखिम उठाना और मुँह के बल सीधे नीचे गिर जाना भी जीवन का ही हिस्सा है। यह हमें वही बनाता है, जो आज हम हैं। जब बच्चा पहली बार चलना सीखना शुरू करता है, तो उसे कई बार नीचे गिरना पड़ता है। यह वास्तव में विफलता ही तो है। लेकिन किसी भी माँ से उसके बच्चे की चलने की क्षमता के बारे में पूछकर देखिए, वह गर्व से, पूरे आत्मविश्वास से घोषणा करेगी—मेरा बच्चा एक दिन जरूर चलेगा। वह कई बार नीचे गिरेगा, लेकिन वह अवश्य

चलेगा। आखिरकार माँ इतना आत्मविश्वस्त कैसे होती है कि उसका बच्चा चलेगा? हाँ, हम सभी इसका उत्तर जानते हैं। हम जानते हैं कि नीचे गिरना और चलना सीखते समय गिर जाना, बस जीवन का हिस्सा है। तो विफलता अन्य चीजों में इस रूप में व्यवहार में क्यों नहीं लाई जाती?

हमारी महान् समस्या यह है कि हमारा समाज सफलता की दिशा में महान् यात्राओं पर प्रकाश डालने की बजाय सफलता का उत्सव मनाने पर ही जोर देता है। ऐसा करते हुए हमारा समाज हमें यह बताना आवश्यक नहीं मानता कि उन महान्-यात्राओं पर जानेवाले महान् लोगों को कितने परीक्षणों, दारुण दुःखों, परेशानियों व विफलताओं से गुजरना पड़ा था। हमें यह इसीलिए नहीं बताया जाता है कि ये बातें मोहक नहीं होती हैं। जरा ध्यान से पढ़िए कि अब तक का सबसे महान् माना गया बास्केटबॉल खिलाड़ी माइकल जॉर्डन क्या कहता है—मैं अपने पेशेवर जोन में 9000 से अधिक गेंद चूक गया हूँ। मैं लगभग 300 खेल खो चुका हूँ। 26 बार मुझ पर जीत दिलानेवाली गेंद मारने का भरोसा किया जाता रहा और मैं चूक गया। मैं बार-बार और फिर से अपने जीवन में विफल हुआ हूँ। और यही कारण है कि मैं सफल हुआ।

तो जीवन में विफल होना आवश्यक है। विफलता आगे बढ़ने का पायदान है, उन्नति का मार्ग है। वास्तव में विफलता हमें पाँच बहुत शक्तिशाली जीवन-पाठ पढ़ाती है और हमें अपने भीतर ये शक्तियाँ पैदा करने में मदद करती है। यदि आप हाल ही में किसी चीज में बुरी तरफ विफल रहे हैं, और आप अभी मुश्किल समय से गुजर रहे हैं, तो अपने मन में इस महत्त्वपूर्ण सबक को जरूर रखें।

1. अनुभव : विफलता से प्राप्त पहला महत्त्वपूर्ण सबक अनुभव है। क्या होता है, जब हम विफल होते हैं! जब हम किसी चीज से गुजरते हैं और प्रत्यक्ष अनुभव के साथ सरलता से विजयी हो जाते हैं, तो यह जीवन के प्रति गहरी समझ विकसित करने में हमारी मदद करता है। इसके साथ ही, कुछ चीजों में विफल होने का अनुभव भी वास्तव में अमूल्य होता है। यह दर्द-प्रेरण के माध्यम से हमारी मनोस्थिति को पूरी तरह से बदल देता है। यह हमें चीजों की वास्तविक प्रकृति व हमारे जीवन में उनके महत्त्व पर विचार करने योग्य बनाकर हमारे भविष्य स्वरूप को बदलता व सुधारता है।

2. ज्ञान : विफलता अपने साथ महत्त्वपूर्ण प्रत्यक्ष ज्ञान को भी लाती है। उस ज्ञान का भविष्य में उपयोग किया जा सकता है, उसी विफलता से उबरने के लिए, जिसने पहली ही बार इतने अधिक दर्द दिए हैं। विफलता से प्राप्त ज्ञान की जगह कुछ भी नहीं ले सकता।

3. लचीलापन : जीवन की विफलता हमें लचीला बनाती है, हममें लोच पैदा करती है, हमें चोट को सहने की शक्ति प्रदान करती है। हम जितनी बार विफल होते हैं, हम उतने ही लचीले होते जाते हैं। बड़ी सफलता हासिल करने के क्रम में

हमारे लिए लचीलेपन की क्षमता को समझना बहुत जरूरी है। क्योंकि यदि हमें लगता है कि हम पहली कोशिश में या फिर पहली कुछ कोशिशों में ही सफल होने के लिए जा रहे हैं, तो हम खुद को कहीं अधिक दर्दनाक विफलता के लिए स्थापित करने के लिए सुनिश्चित कर रहे हैं।

लचीलेपन की विशेषता हमें जीवन में कई मायनों में मदद कर सकती है। लचीलापन जीतने के लिए खेल की संरचना बनाकर सफलता पैदा करने में मदद करता है। वे दिन गए, जब हम बुलंद उम्मीदों में जीते थे कि सबकुछ रातोरात होगा। जीवन के अनुभवों व ज्ञान ने हमें इतना लचीला बना दिया है कि अब हम यही अपेक्षा रखते हैं कि सच्ची सफलता बहुत भारी मात्रा में मेहनत व प्रयास लाएगी।

4. विकास : जब हम विफल होते हैं, तो हम मनुष्य के रूप में बढ़ते व परिपक्व होते जाते हैं। हम अपने जीवन के अर्थ व समझ की गहराइयों तक पहुँचते हैं और फिर हमें अच्छी तरह मालूम रहता है कि हम जो कुछ भी कर रहे हैं, क्यों कर रहे हैं। यह बढ़त व परिपक्वता हमें चीजों को वास्तविक दृष्टिकोण में ले जाने और दर्दनाक स्थितियों से अर्थ का विकास करने का विचार करने में मदद करती है।

जीवन हमें आगे बढ़ने और सुधार करने के लिए ही बनाया गया है। बढ़त व सुधार हमारा आधारभूत आनुवंशिक गुण है, नहीं तो हम अलग-अलग व्यक्ति विशेषों के रूप से कैसे विकसित हो पाते, सभ्यताएँ कैसे विकसित हो पातीं और विश्व समाज का निर्माण कैसे हो पाता?

5. मूल्य : जीवन की विफलता से हम जो सबसे बड़ा सबक सीखते हैं, वह है— बहुत अधिक मूल्य की रचना व प्रसार की आवश्यकता। वास्तव में सफलता के केंद्र में मूल्य ही है और मूल्य की कमी ही विफलता को आमंत्रित करती है। जब आप अपनी पिछली विफलताओं का विचार करें, तो सोचें कि आपने उन कामों में कितने मूल्य पैदा किए थे? क्या आप उन कामों में और अधिक मूल्यवर्धन (वैल्यू एडिशन) कर सकते थे? क्या वह मूल्यवर्धन विफलता को रोक सकता था? जब आप अपार मूल्य की रचना करना सीखते हैं और ऐसा लगातार करते हैं, तो आप अंततः जरूर सफल हो जाएँगे।

कुछ भी असंभव नहीं है, सबकुछ मनुष्य ने ही बनाया है। और आप भी सबकुछ कर सकते हैं। शर्त एक ही है कि आपको अपनी विफलताओं से सीखना होगा और ऐसा लगातार करना होगा। विफलता ही सफलता का मूल-मंत्र है।

❑

4

सफलता का मौलिक गुण

सफल होने के लिए व्यक्ति विशेष में कुछ मौलिक गुणों का होना अनिवार्य है। आप अकेले ही सफलता नहीं हासिल कर सकते हैं, इसके लिए लोगों के साथ मिलकर कार्य करने की जरूरत पड़ती है। जब तक आप कार्यसमूह के सदस्य (टीम मेंबर) के रूप में काम करना नहीं सीखते हैं, तब तक आप अच्छे नेतृत्वकर्ता भी नहीं हो सकते। इसीलिए सामूहिक कार्यभावना (टीम वर्क स्पिरिट) को सफलता का सबसे महत्त्वपूर्ण घटक माना जाता है। सफलता का दूसरा मौलिक गुण है—पेशेवर कार्यकुशलता, जो किसी भी क्षेत्र विशेष में सफल होने के लिए अनिवार्य होती है। और सफलता का सबसे संवेदनशील गुण है—दृढ इच्छाशक्ति, जो आपको सफल होने के लिए विफलता से डटकर सामना करना सिखाती है और हमेशा मूल उद्देश्य पर ध्यान केंद्रित रखने में आपकी मदद करती है।

तो क्या आपमें ये सभी मौलिक गुण हैं? यदि हाँ, तो आपको सफल होने से कोई भी रोक नहीं सकता। यदि नहीं, तो आपको अपने में ये तीनों गुण विकसित करने होंगे। याद रखें कि ईश्वर ने हर व्यक्ति को सफल होने के लिए ही पैदा किया है। आपमें जन्मजात रूप से अनंत संभावनाएँ विद्यमान हैं। बस आपको अपने जीवन का मूल्य समझकर स्वयं में इन तीन मौलिक गुणों का विकास करना होगा। यह कोई बहुत मुश्किल काम नहीं है, लेकिन आसान काम भी नहीं है। आप जानते हैं कि इस संसार में कुछ भी मुफ्त नहीं मिलता, फिर बिना कुछ त्याग किए सफलता कैसे मिल सकती है?

क्या आपमें सामूहिक कार्यभावना है?

आप किसी भी संगठन के नेतृत्वकर्ता से पूछकर देख लीजिए कि उसे सफल होने के लिए किस गुण की सबसे अधिक जरूरत पड़ी थी। एक ही उत्तर मिलेगा —सामूहिक कार्यभावना, अर्थात् समूह में दूसरे सदस्यों के साथ मिलकर काम करने की भावना। ध्यान रहे कि एक ही समूह में विभिन्न स्वभाववाले लोग होते हैं। ऐसे में जब आप किसी कार्यसमूह में काम करते हैं तो आपको सभी के साथ मिलकर काम करना होता है और सभी का भरोसा भी जीतना होता है। लेकिन यह तभी संभव हो पाता है, जब आपमें लोक-व्यवहार की कुशलता होती है। आप किसी भी सफल बिक्रीकर्मी से पूछिए कि उसे सबसे अधिक किस गुण की जरूरत पड़ती है, तो वह आपको बताएगा कि उसके लिए उत्पादों की जानकारियों से अधिक महत्त्वपूर्ण लोगों की समझ होती है।

आप किसी भी दूसरे क्षेत्र के लोगों, चाहे वे अध्यापक हों या अभियंता या व्यापारी/उद्यमी या पुजारी या माता-पिता, से बात कीजिए और पूछिए कि जो लोग अपने जीवन में उन्नति कर पाते हैं और जो नहीं कर पाते हैं, उनके बीच सबसे बड़ा अंतर क्या होता है? तो सभी लोग आपको एक जैसा ही उत्तर देंगे—लोगों के दिल जीतने की क्षमता। जी हाँ, बहुत से अपनी पेशेवर कार्यकुशलता में काफी निपुण होते हैं, उस क्षेत्र के लोग उनकी तकनीकी क्षमता का लोहा मानते हैं, फिर भी वे संगठन के नेतृत्वकर्ता नहीं बन पाते। क्यों? उनमें लोक-व्यवहार कला का अभाव होता है। वे अपनी ही तरह के लोगों के बीच तो ठीक प्रकार से काम कर लेते हैं, लेकिन उनके लिए विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ मिल-जुलकर काम कर पाना कठिन होता है। इसीलिए हरेक अध्यापक किसी शिक्षा संस्थान का प्राचार्य नहीं बन पाता है, हरेक अभियंता अपनी तकनीकी कंपनी का मुख्य कार्यकारी अधिकारी नहीं बन पता है, और हरेक माता-पिता अपने आस-पड़ोस या समाज में लोकप्रिय नहीं हो पाते हैं। तो यदि आपमें सामूहिक कार्यभावना है, आप दूसरों के साथ मिल-जुलकर कार्य कर सकते हैं और दूसरों का दिल जीतना, उनका सहयोग सुनिश्चित कर सकते हैं, तो फिर आपका जीतना या अपने उद्देश्य में सफल होना भी सुनिश्चित हो जाता है।

अपने व्यक्तित्व को पहचानें—मनोवैज्ञानिक समुदाय व्यक्ति विशेषों को विभिन्न वर्गों में वर्गीकृत करने की लगातार कोशिशें करता आ रहा है। लोग स्वाभाविक व आनुवंशिक रूप से एक-दूसरे से अलग होते हैं। इसीलिए विभिन्न व्यक्तित्वों के मूल्यांकन के लिए हमें उनके व्यक्तित्व-विशेषताओं व प्रकारों की पहचान करनी पड़ती है। निश्चित तौर पर व्यक्तित्व-प्रकार लोगों को समझने के लिए दिशा-निर्देश के रूप में काम कर सकते हैं। लेकिन व्यक्तियों के अनुभव, स्थितियाँ और यहाँ तक कि उनकी तात्कालिक मनोदशा भी उनके कार्य को प्रभावित करती है। ऐसे में व्यक्तित्व की विशेषताओं (पर्सनालिटी ट्रेट) की पहचान भी बहुत जरूरी होती है। इसके लिए बिग फाइव पद्धति का उपयोग किया जाता है, जिसके अंतर्गत मनुष्य की पाँच विशेषताओं—खुलापन (ओपेनेस), विवेकशीलता (कॉनसिन्ससनेस), बहिर्मुखता (एक्स्ट्रोवर्जन), सहमतता (एग्रीएबलनेस) व मनोविक्षुब्धता (न्यूरोटिसिज्म) पर विचार किया जाता है। किसी व्यक्ति में ये विशेषताएँ या लक्ष्ण हैं या नहीं, इसकी निगरानी कर आप उस व्यक्ति के बारे में धारणा कायम कर सकते हैं कि वह कुछ नया करने, किसी कार्य-समूह में काम करने या फिर झगड़ा करने की कोशिश के लिए कितना इच्छुक होगा। इसी आधार पर आप अपने व्यक्तित्व का मूल्यांकन कर सकते हैं।

लेकिन व्यक्तित्व को समझने के लिए अमरीकी कवयित्री एला व्हीलर विलकॉक्स (5 नवंबर, 1850 से 30 अक्तूबर, 1919) ने अपनी कविता, 'आप कौन से हैं?' ('व्हिच आर यू?') में बहुत ही विचारोत्तेजक टिप्पणियाँ की हैं।

उस कविता का निचोड़ इस प्रकार है—इस धरती पर दो तरह के लोग पाए जाते हैं, बस दो तरह के, उससे अधिक नहीं। वे पापी या संत नहीं हैं कि आप उन्हें आसानी से समझ सकें। भले लोग आधे बुरे हैं और बुरे लोग आधे अच्छे। आप व्यक्ति विशेष को उसके धन के आधार पर धनी व गरीब की श्रेणियों में नहीं बाँट सकते। इसके लिए सबसे पहले उस व्यक्ति के विवेक व स्वास्थ्य की स्थिति का पता लगाना जरूरी होता है। आप लोगों को विनम्र या घमंडी की श्रेणी में भी नहीं रख सकते, क्योंकि आप उनके जीवन के छोटे से हिस्से को जानकर यह फैसला नहीं कर सकते। जो व्यर्थ ही अपने घमंड में रहता है, उसे तो आदमी के रूप में गिनना भी नहीं चाहिए।

इस मार्मिक कविता में एला विलकॉक्स आगे कहती है—आप लोगों को सुखी व दुःखी श्रेणी में भी नहीं रख सकते, क्योंकि जीवन के वर्ष तो पलक झपकते ही निकल जाते हैं। ऐसे में किसी को अपने जीवन पर हँसी आती है, तो कोई उसके लिए आँसू बहाता है। इस धरती पर दो तरह के लोग हैं, वे जो दूसरों को भी उठा पाने में सक्षम हैं या फिर वे, जो इतने कमजोर हैं कि अपना बोझ भी नहीं सँभाल पा रहे हैं। आप धरती पर कहीं भी चले जाएँ, आपको अधिकतर जनसाधारण लोग मिलेंगे और वे भी इन वर्गों में ही कहीं बँटे हुए मिलेंगे। और आप यह आश्चर्यजनक तथ्य पाएँगे कि 20 कमजोर लोगों में केवल एक ही दूसरों को भी उठा पाने में सक्षम है। अब सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि आप किस वर्ग में हैं? क्या आप दूसरों के बोझ को कम कर पाने में सक्षम हैं, जो दूसरों के भारी बोझ उठाते हुए टूटकर सड़क पर गिरे पड़े हैं? या फिर आप भी कमजोर श्रेणी के प्राणी हैं, जो दूसरों को अपने हिस्से का परिश्रम, चिंताएँ व समस्याएँ साझा करने दे रहे हैं?

अब कैसा महसूस कर रहे हैं आप? एला विलकॉक्स की यह कविता आपको दर्पण के सामने खड़ा कर देने में सक्षम है। अब आपको स्वयं को निहारना चाहिए और यह प्रश्न पूछकर अपने व्यक्तित्व की पहचान करने की कोशिश करनी चाहिए। मनोवैज्ञानिकों द्वारा परिभाषित व वर्गीकृत वर्गों में स्वयं को डालने की बजाय आपको एला द्वारा पूछे गए प्रश्न बार-बार दोहराना चाहिए। सचमुच, इस धरती पर दो ही प्रकार के लोग हैं—एक, दूसरों का ऊपर उठानेवाले और दूसरे, दूसरों पर अपना बोझ डालनेवाले; अर्थात् सक्षम व अक्षम, स्वतंत्र व आश्रित। सक्षम या स्वतंत्र श्रेणी के लोग हमेशा दूसरों के महत्त्व को बढ़ाने, उनकी जिम्मेदारियों के बोझ को कम करने और उन्हें उन्नत बनाने में मदद करने के आदी होते हैं। इसके उलट, अक्षम या आश्रित श्रेणी के लोग दूसरों की महत्ता को घटाने, उनपर अपनी जिम्मेदारियों का बोझ डालने और उन्हें नीचे गिराने के आदी होते हैं। स्पष्ट है कि जब आप जीवन में सफल होने की तैयारी कर रहे हैं, तो सक्षम व स्वतंत्र व्यक्ति हैं और आपकी सोच हमेशा सकारात्मक ही रहती है।

चरित्र की महत्ता—कोई व्यक्ति जीवन की विभिन्न परिस्थितियों से कैसे निपटता है, इससे उसके चरित्र के संबंध में बहुत सी बातें पता चलती हैं। जी हाँ, संकट आपके चरित्र का निर्माण तो नहीं कर सकता है, लेकिन एक बात तय है कि वह आपके चरित्र को उजागर जरूर करता है। आपदा बिल्कुल दोराहे की तरह ही होती है, जो व्यक्ति विशेष को दो राहों में से किसी एक को चुनने की स्थिति पैदा करती है। एक राह आपके चरित्र पर टिके रहनेवाली राह होती है, तो दूसरी चरित्र से समझौता करनेवाली। अर्थात् मुश्किल परिस्थितियों में भी आप अपनी नैतिकता को नहीं छोड़ते हैं तो चरित्रवान् वर्ग के व्यक्ति हैं, और आप ऐसा इसीलिए कर पाते हैं कि आप सक्षम व स्वतंत्र व्यक्ति हैं, जो हर हाल में सकारात्मक कदम ही बढ़ाता है। इसके विपरीत जो व्यक्ति विपरीत समय में नैतिक मूल्यों से समझौता करते हैं, वे चरित्रहीन श्रेणी के लोग होते हैं। और वे ऐसे इसीलिए होते हैं कि वे असक्षम व आश्रित होते हैं।

स्पष्ट है कि सफल लोग चरित्रवान् होते हैं, और चरित्रवान् ही सफल होते हैं। याद रहे कि चरित्र की राह पर चलना आसान नहीं है; इस राह पर चलनेवाले लोगों को बहुत से नकारात्मक परिणामों से भी संघर्ष करना पड़ सकता है; लेकिन जो इस राह पर टिका रहता है और अपने जीवन के मूल उद्देश्य की दिशा में आगे बढ़ता रहता है, उसकी सफलता को कोई भी रोक नहीं सकता। इसीलिए अथर्ववेद संहिता के अंतर्गत आनेवाले 'मुंडकोपनिषद' इस सर्वज्ञात मंत्र (मुंडक 3, खंड 1, श्लोक 6) की घोषणा करता है, सत्यमेव जयते नानृतम सत्येन पंथा विततो देवयानः येनाक्रमंत्यृषयो ह्याप्तकामो यत्र तत् सत्यस्य परमम् निधानम् अर्थात् सत्य ही जय को प्राप्त होता है, मिथ्या नहीं। सत्य से देवयान मार्ग (डिवाइन पाथ/छल, कपट, अहंकार रहित मार्ग) का विस्तार होता है, जिसके द्वारा आप्तकाम (तृष्णा रहित, जिनकी इच्छा पूरी तरह से परिपूर्ण हो चुकी है) ऋषि लोग उस पद को प्राप्त होते हैं, जहाँ सत्य का परम निधान (सुप्रीम ट्रेजर) वर्तमान है।

वैसे हर कोई दावा करता है कि वह चरित्रवान् (विथ करैक्टर) व निष्ठावान् (लॉयल) है, लेकिन उसका चरित्र व उसकी निष्ठा उसके कहने से नहीं, उसके काम से प्रकट होती है। आपका काम तय करता है कि आप कैसे हैं। आप चाहे कितनी सावधानी बरतें, कितना ही कुशल नाटक करें, आपका काम आपके चरित्र को जरूर उजागर कर देगा। आप कैसे हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप क्या देखते हैं, आपकी सोच क्या है, आपका दृष्टिकोण क्या है? और आप जैसा भी देखते हैं, आपकी जैसी सोच होती है, आपका जैसा दृष्टिकोण होता है, उससे ही आपके क्रियाकलाप भी निश्चित होते हैं। यही कारण है कि किसी व्यक्ति के चरित्र को उसके कार्य से अलग नहीं किया जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति के कार्य और उसकी नीयत में विरोधाभास हो, तो उसके चरित्र पर ध्यान देकर इसके कारण का पता लगाया जा सकता है। याद रखें—

चरित्र स्वेच्छित होता है—हम अपनी कुशलता या बुद्धिमत्ता का चुनाव नहीं कर सकते, लेकिन अपना चरित्र चुन सकते हैं। हमारा चरित्र हमारी स्वेच्छा पर निर्भर है। वैसे जीवन में हम बहुत सी चीजों का चुनाव नहीं कर सकते। हम अपने माता-पिता नहीं चुन सकते; हम अपने पालन-पोषण के स्थान या परिस्थिति नहीं बदल सकते और हम अपने आनुवंशिक या जन्मजात कौशल या बुद्धि को भी नहीं चुन सकते। ध्यान दें, हम जिन चीजों का चुनाव कर सकते हैं, उसका निर्माण भी कर सकते हैं। यही कारण है कि हम अपना चरित्र स्वयं गढ़ते हैं। कोई हमें मजबूर नहीं करता कि बुरे समय में हम नैतिकता पर डटे रहें या अनैतिक काम करें; गलत कार्य से धन कमाएँ या फिर मेहनत से सच बोलने का जोखिम उठाएँ या झूठ बोलकर बच निकलें, यह सबकुछ हम स्वयं ही करते हैं। हाँ, खूबसूरत बहाना यह जरूर होता है कि हमें मजबूरी में ऐसा करना पड़ा! कैसी मजबूरी? किसने आपको मजबूर किया? उत्तर स्पष्ट है—स्वयं आपने। जो अक्षम व आश्रित है, वही मजबूर भी होता है और उसकी तुलना मनुष्य से नहीं की जा सकती, वह पशुओं जैसा ही होता है। क्योंकि पशु अपने चरित्र का निर्माण नहीं कर सकता, क्योंकि उसके पास मनुष्य जैसी बुद्धि नहीं होती।

चरित्रवान् ही नेतृत्वकर्ता हो सकता है—वैसे तो चरित्रहीन भी नेतृत्वकर्ता का पद हथिया सकता है, लेकिन वह कभी भी सच्ची सफलता हासिल नहीं कर सकता। क्योंकि केवल चरित्रवान् व्यक्ति ही दूसरों को अपना अनुसरण करने के लिए प्रेरित कर सकता है। चरित्रहीन के पीछे वही जाता है, जो खुद वैसा ही होता है। सच्चाई यही है कि जिसमें कोई चरित्र नहीं होता, वह अकेला ही होता है। आपने भी यह कहावत जरूर सुनी होगी कि यदि आप नेतृत्व कर रहे हैं और कोई आपके साथ आपके रास्ते पर नहीं चल रहा है, तो आप बस टहल ही रहे होते हैं। जो नेतृत्वकर्ता चरित्रवान् नहीं होता, जिसके चरित्र में दुर्गुण होता है, उसके साथ काम करनेवाले या उसके पीछे चलनेवाले उसपर भरोसा नहीं करते हैं और उसका साथ छोड़ देते हैं। वास्तव में चरित्रहीन लोगों को नेतृत्वकर्ता ही नहीं कहा जा सकता है।

चरित्र की सीमा ही उन्नति को सीमित करती है—आपने कई बहुत प्रतिभाशाली व कुशल व्यक्तियों को एक निश्चित सीमा तक सफल होने के बाद नीचे गिरते देखा होगा। ऐसा क्यों होता है? यदि उस व्यक्ति के क्रियाकलापों का अध्ययन करें, तो स्पष्ट होगा कि उसके चरित्र ने उसकी उन्नति को सीमित कर दिया। ऐसी स्थिति को मनोविज्ञान में सफलता संलक्षण (सक्सेस सिंड्रोम) कहा जाता है। बड़ी-बड़ी सफलताएँ हासिल करनेवाले लोग कई बार अहंकारी हो जाते हैं, उनकी मानसिक अवस्था असंतुलित हो जाती है और वे मानसिक तनाव के कारण अपने मूल चरित्र (जिसके कारण उन्हें सफलताएँ मिलती रही हैं) से भटक जाते हैं। संयोग से कई सफल हुए लोगों में तो शुरू से ही चरित्र का अभाव होता है। ऐसे ही लोग अपने तनाव व अकेलापन को दूर करने के लिए नशाखोरी करने

लगते हैं, वेश्यागामी हो जाते हैं और ऐसे रोमांचक क्रियाकलापों में संलग्न हो जाते हैं, जो समाज के लिए अहितकारी होते हैं। इस तरह वे लोग अपने चरित्र को सीमित कर अपनी संभावनाओं को भी सीमित कर लेते हैं।

स्वयं को परखें व चरित्र निर्माण करें—यदि आप स्वयं को उपरोक्त किसी भी दलदल में फँसा हुआ पाते हैं, तो आपको तत्काल पीछे हटने की, अवकाश लेने की जरूरत है। जब भी सफलता तनाव देने लगे, आपको तय मान लेना चाहिए, आप अपने जीवन के मूल उद्देश्य के मार्ग से भटक गए हैं। आप तत्काल उस तथाकथित सफलता के रास्ते को छोड़ दें और अपने आपमें लौट आएँ। अधिकतर लोग सफलता के नशे के इतने आदी हो चुके होते हैं कि उससे बाहर आना बहुत मुश्किल हो जाता है। ऐसी स्थिति में आप अपनी स्वाभाविक सक्षमता व स्वतंत्रता खो चुके होते हैं और आपकी हालत भी अक्षम व आश्रित वर्ग के लोगों जैसी हो जाती है। ऐसे लोगों को तत्काल तनाव से उबरने की जरूरत होती है और यदि वे स्वयं ही इसमें सक्षम नहीं रह गए हैं, तो उन्हें तत्काल पेशेवर सहायता लेने की आवश्यकता है।

ऐसी स्थिति में आपको यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आपके मूल चरित्र में दरार आ चुकी है, जिन्हें तत्काल भरे जाने की आवश्यकता है। अन्यथा आप सफलता-यात्रा पर और आगे नहीं बढ़ सकते हैं। विडंबना यह है कि आमतौर पर सफल लोग इस कगार पर पहुँचने के बाद भी यही सोचते हैं कि यह बुरा समय है, जिसे धन व बढ़ते सम्मान के साथ काटा जा सकता है। लेकिन क्रूर सच यही है कि यदि आपने अपने आपको परखने में अर्थात् अपने चरित्र को परखने में देर की, तो आपकी तथाकथित सफलता ही आपके लिए विनाशकारी बन जाती है। इस तरह आपका चरित्र आपके क्रियाकलापों पर अंकुश का काम करता है और आपको कुछ भी नकारात्मक नहीं करने देता। इसीलिए अपने जीवन के मूल उद्देश्य के अनुसार अपना चरित्र निर्माण करना भी जरूरी होता है, और जब आप ऐसा करते हैं, तो आपकी सफलता आपके सिर नहीं चढ़ती है और आप पूर्ण संतुलन के साथ अपनी जीवन-यात्रा को जारी रख पाते हैं।

जब आप अपने चरित्र के नकारात्मक हो जाने के संकट में फँस जाएँ, तो स्वयं से सवाल करें कि क्या आपकी कथनी व करनी में हर समय सामंजस्य रहता है? जब आप कहते हैं कि आप अमुक काम को निश्चित समय पर पूरा करेंगे, तो हमेशा आप ऐसा कर पाते हैं? जब आप बच्चों से उनके विद्यालय के कार्यक्रम में उपस्थित होने का वादा करते हैं, तो क्या सही समय पर वहाँ पहुँच पाते हैं? क्या लोग किसी कानूनी समझौते की तरह ही आपके हाथ मिलाने पर भरोसा कर पाते हैं? यदि हाँ, तो आप बिल्कुल ठीक हैं और यदि नहीं, तो आपको तत्काल चरित्र-सुधार की दिशा में काम करना होगा। यह काम आप स्वयं भी कर सकते हैं, और यदि स्वयं करने की स्थिति में न हों तो तत्काल मनोरोग

विशेषज्ञ की सलाह लें। यदि आप स्वयं ही अपने चरित्र में सुधार करने को इच्छुक हैं, तो आप ये उपाय कर सकते हैं—

• **दरारों को खोजें**—इसके लिए आपको अपने जीवन के मुख्य क्षेत्रों—अपने काम, विवाह-संबंध, परिवार, नौकरी आदि पर ध्यान देने में थोड़ा समय बिताना होगा और देखना होगा कि कहीं आपने किसी को दुःख पहुँचाया है, अपने कर्तव्यों से कोई समझौता किया है या लोगों को निराश किया है? पिछले कुछ महीनों घटी ऐसी घटनाओं को ठीक प्रकार से याद करें और उसकी एक सूची तैयार कर लें।

• **कार्यों की बारंबारता को खोजें**—अब अपने क्रियाकलापों की सूची पर नजर डालें और देखें कि ऐसा कौन सा कार्य-व्यवहार है, जिसे आप बार-बार करते हैं? कोई-न-कोई ऐसा कार्य जरूर मिलेगा, जहाँ आप स्वयं को कमजोर पाते हैं, और न चाहते हुए भी वैसा करते रहते हैं या फिर कोई ऐसी समस्या जरूर होगी, जो रह-रहकर आपके सामने खड़ी हो जाती होगी? बारंबारताओं से आपके चरित्र के दोष आपके सामने आ जाएँगे और आपको उन्हें सुधारने की दिशा में कदम बढ़ाने में आसानी होगी।

• **गलती स्वीकार कर क्षमा-याचना करें**—चरित्र में सुधार का काम तभी शुरू हो जाता है, जब आप अपनी गलतियों को स्वीकार करते हैं। और जब आप ऐसा करते हैं, तो आप स्वयं को गलतियों के कारण पैदा हुई विपरीत परिस्थिति से मुकाबला करने के लिए तैयार करते हैं। अब आपको उन सभी लोगों से क्षमा माँगनी पड़ेगी, जिनके साथ आपने गलत व्यवहार किया है। सावधान! ऊपरी मन से क्षमा-याचना से काम नहीं चलेगा। यह काम आपको गंभीरतापूर्वक करना होगा, ताकि आपसे दुःखी हुए लोगों को पता चल सके कि आप सचमुच बदल रहे हैं।

• **चरित्र का पुनर्निर्माण**—अब आप अपने चरित्र को पुनर्गठित करने की स्थिति में आ गए हैं। क्षमा-याचना के बाद आपके मन का बोझ उतर गया है। अब आप अपनी चरित्र की त्रुटियों को समझ गए, इसीलिए भविष्य में ऐसी त्रुटियों से बचें। याद रखें कि त्रुटियाँ जीवन का हिस्सा हैं, लेकिन इसे समय रहते पहचानना व उसमें सुधार करना ही अपने मूल चरित्र को बरकरार रखना है। और जब आप अपनी त्रुटियों को दूर करते हैं, तो स्वयं को पहले से बड़ा बना लेते हैं, अपने चरित्र को पहले की तुलना में ज्यादा मजबूत बना लेते हैं। यही तो चरित्र-गठन की प्रक्रिया है।

इस तरह जब आप अपने व्यक्तित्व को पहचान लेते हैं, चरित्र की महत्ता को स्वीकार करते हैं और स्वयं को परखकर चरित्र को पुनर्गठित करते हैं, तो स्वाभाविक रूप से आपकी सामूहिक कार्य-भावना का विकास होता है। और आप सच्चे नेतृत्वकर्ता के रूप में भविष्य की ओर सधे कम बढ़ा पाने में सक्षम हो जाते हैं।

आपकी पेशेवर कार्यकुशलता कैसी है?

सफलता का दूसरा सबसे महत्त्वपूर्ण गुण है—पेशेवर कार्यकुशलता। बेंजामिन फ्रेंकलिन को संयुक्त राज्य अमरीका के संस्थापक जनकों में गिना जाता है। वह बहु-प्रतिभाशाली व्यक्ति था। वह एक ही साथ प्रमुख लेखक, मुद्रक, राजनीतिक विचारक (पोलिटिकल थ्योरिस्ट), राजनीतिज्ञ, संगतराश, पोस्टमास्टर, वैज्ञानिक, आविष्कारक, नागरिक कार्यकर्ता, राजनेता (स्टेट्समैन) व राजनयिक (डिप्लोमेट) भी था। एक वैज्ञानिक के रूप में वह अमरीकी ज्ञानोदय और अपनी खोजों व बिजली के बारे में सिद्धांतों के लिए भौतिक विज्ञान के इतिहास में एक प्रमुख हस्ती थे। एक आविष्कारक के रूप में बेंजामिन फ्रेंकलिन को बिजली की छड़ (लाइटनिंग रॉड), चश्मे का द्विनाभित शीशा (बाइफोकल लेंस) व फ्रेंकलिन स्टोव के लिए जाना जाता है। वह फिलाडेल्फिया के अग्निशमन विभाग (फायर डिपार्टमेंट), पेंसिल्वेनिया विश्वविद्यालय, एक आइवी लीग संस्थाओं सहित कई नागरिक संगठनों के सुविधा प्रदाता थे। एक साथ इतनी पेशेवर कार्यकुशलता सभी में संभव नहीं हो सकती है, लेकिन हरेक व्यक्ति में कोई-न-कोई स्वाभाविक कार्यकुशलता जरूर होती है। यदि वह अपनी जन्मजात प्रतिभा को पहचान पाने में सक्षम होता है और अपनी कार्यकुशलता को लगातार विकसित करता जाता है, तो उसकी सफलता भी सुनिश्चित हो जाती है।

बेंजामिन फ्रेंकलिन का बहुत ही लोकप्रिय कथन है, जो लक्ष्य बेधना हो, उससे ऊपर का निशाना साधो। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि वह स्वयं को हमेशा साधारण नागरिक ही मानते-समझते रहे थे। इसकी बहुत बड़ा कारण यह था कि वह मोमबत्ती बनानेवाले मामूली व्यापारी की सत्रह संतानों में से एक थे और संपन्नता उसके परिवार से कोसों दूर थी। उसका बचपन कितना मुश्किल भरा होगा, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि वह केवल दो वर्षों के लिए ही विद्यालय जा पाया था और 12 वर्ष की आयु में ही उसे अपने भाई के मुद्रणालय (प्रिंटिंग प्रेस) में सहयोग के लिए जाना पड़ा था। वह बहुत परिश्रमी था। उसने अपने दैनंदिन आचार-व्यवहारों को संचालित करने के लिए 13 गुण निर्धारित किए थे और उन्हीं के आधार पर वह स्वयं को आँका करता था। उसने अपनी आत्मकथा में उन गुणों को संक्षिप्त विवरण के साथ इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

1. संयम (टेंपरेंस) : सुस्ती के लिए नहीं खाओ और उन्नयन के लिए न पियो।

2. मौन (साइलेंस)—वही बोलो, जो दूसरों को या तुम्हें लाभ दे। तुच्छ बातचीत से बचो।

3. अनुक्रम (ऑर्डर)—अपनी चीजों को उनके स्थानों पर रहने दो। अपने क्रियाकलाप के हर हिस्से को उसका समय लेने दो।

4. संकल्प (रेजोल्यूशन)—जो तुम्हें चाहिए, प्रदर्शन का संकल्प लो। जो संकल्प लेते हो, असफल हुए बिना प्रदर्शित करो।

5. मितव्ययिता (फ्रूगालिटी)—उतना ही खर्च करो, जो दूसरों व तुम्हारा अच्छा करने के लिए हो, अर्थात् कुछ भी बरबाद न करो।

6. उद्योग (इंडस्ट्री)—कोई समय मत गँवाओ। हमेशा कुछ उपयोगी में कार्यरत रहो। सभी अनावश्यक कार्यों से बचो।

7. निष्कपटता (सिंसेरिटी)—किसी हानिकारक छल का प्रयोग न करो। भोलेपन से व उचित रूप में सोचो; और अगर आप बोलते हो तो उसी के अनुसार बोलो।

8. न्याय (जस्टिस)—लाभों को नुकसान पहुँचाकर या मिटाकर कुछ गलत न करो, वह तुम्हारा कर्तव्य है।

9. मद्धिमता (मॉडरेशन)—चरम सीमाओं से बचो। क्रोध दिलानेवाली चोटों को उतना सहन करो, जितना कि तुम सोचते हो कि वे सहने लायक हैं।

10. स्वच्छता (क्लीनलीनेस)—शरीर, कपड़े या बस्ती में कोई अशुद्धता सहन न करो।

11. चारित्रिक विशुद्धता (चेस्टिटी)—केवल स्वास्थ्य या वंश के लिए ही कभी-कभार मैथुन उपयोग करो; सुस्ती, कमजोरी या अपने स्वयं की या दूसरे की शांति या प्रतिष्ठा को चोट पहुँचाने के लिए कभी नहीं।

12. प्रशांति (ट्रांक्विलिटी)—हलकी बातों पर या आम या अपरिहार्य दुर्घटनाओं पर परेशान न होओ।

13. विनम्रता (हुमिलिटी)—यीशु व सुकरात की नकल करो।

बेंजामिन फ्रेंकलिन हर सप्ताह एक गुण पर सख्ती से ध्यान देने के लिए प्रतिबद्ध था और 13 सप्ताह बाद उस प्रक्रिया को फिर से दोहराया करता था। इस तरह वह हर वर्ष गुण-योजना चक्र चार बार पूरा करता था। उसने इन गुणों की प्रगति को आँकने के लिए 13 सारणियों की एक पुस्तिका भी बना रखी थी। हरेक सारणी के ऊपर एक गुण लिखा हुआ था। उस सारणी में सप्ताह के प्रत्येक दिन का स्तंभ होता था और 13 पंक्तियाँ होती थीं, जिन पर 13 गुणों के पहले अक्षर लिखे होते थे। हर शाम वह दिन के अपने क्रियाकलापों की समीक्षा करता था, और हरेक गुण के आगे दोषों के निशान लगाता था। उसका लक्ष्य अपने दिन व सप्ताह बिना किसी दोष के अर्थात् सारणी में बिना किसी निशान के गुजारना था। शुरुआत में तो उन सारणियों में काफी निशान होते थे, लेकिन बाद में वे निशान कम होने लगे थे। कुछ समय बाद उसने इस प्रक्रिया को वर्ष में एक बार करना शुरू कर दिया था और उसके बाद कई वर्षों में एक बार, जब तक उसने अंततः सारे निशान मिटा न दिए थे। इसके बाद वह आजीवन उस पुस्तिका को यादगार के रूप में अपने पास ही रखता था।

अब आपको भी यह समझ पाने में आसानी हो रही होगी कि बेंजामिन फ्रेंकलिन ने एक साथ कैसे इतनी सारी पेशेवर कार्यकुशलताओं को हासिल किया था। 20 वर्ष की आयु में उसने स्वयं छपाई का काम शुरू कर दिया था। यदि वह अपने इसी काम से संतुष्ट रह जाता, तो उसका नाम अपने

गृहनगर फिलाडेल्फिया (पेंसिल्वेनिया) के इतिहास में भी कहीं हाशिए पर ही रह गया होता। लेकिन उसने असाधारण जीवन जीने का संकल्प किया था। वह स्वाधीनता की घोषणा का सह-लेखक था और बाद में उसने पेरिस की संधि व संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान लिखने में भी अहम भूमिका निभाई थी। बेंजामिन फ्रेंकलिन ही एकमात्र ऐसा व्यक्ति था, जिसने उन तीनों ऐतिहासिक दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए थे।

लगभग सात दशकों के अपने पेशेवर जीवनकाल में बेंजामिन फ्रेंकलिन ने जिस किसी भी काम में हाथ लगाया था, उसे चमकाकर रख दिया था। 1726 में जब उसने छपाई का काम शुरू किया था, तो लोगों को यही लगा था कि फिलाडेल्फिया में तीसरे मुद्रणालय के रूप में वह अपने काम को जमा नहीं सकेगा। लेकिन 'पेंसिल्वेनिया गजट' का प्रकाशन शुरू कर 23 वर्ष की आयु में सफल समाचार-पत्र संपादक व मुद्रक बन गया था। उसने रिचर्ड पौंडर्स छद्मनाम से 'पूअर रिचर्ड्स अल्मनैक' नामक वार्षिक सूचना-कोश (अल्मनैक) का प्रकाशन शुरू किया था। यह इतनी लोकप्रिय हुई थी कि उसकी कमाई से बेंजामिन फ्रेंकलिन धनी कहलाने लगा था। 1751 में उसने द अकेडमी एंड कॉलेज ऑफ फिलाडेल्फिया की स्थापना का बीड़ा उठाया था और उसका पहला अध्यक्ष भी था, जो बाद में पेंसिल्वेनिया विश्वविद्यालय बन गया। कई वर्षों तक फिलाडेल्फिया का डाकपाल (पोस्टमास्टर) रहने के बाद उसे 1953 में ब्रिटिश उपनिवेशों का उप-महाडाकपाल (डिप्टी पोस्टमॉस्टर जनरल) नियुक्त किया गया था।

उसने अमरीकन फिलोसोफिकल सोसाइटी का गठन किया था और उसका पहला सचिव था और 1969 में अध्यक्ष चुना गया था। बेंजामिन फ्रेंकलिन अमरीका में राष्ट्रीय नायक बन गया था, जब उसने कई उपनिवेशों के प्रतिनिधि के रूप में लंदन स्थित ग्रेट ब्रिटेन की संसद् में अलोकप्रिय स्टांप एक्ट अर्थात् अमरीकी उपनिवेशों में शुल्क अधिनियम, 1765 को निरस्त कराने की कोशिशों में जुटा था। वह राजनयिक था। पेरिस में अमरीकी मंत्री के रूप में उसने न केवल फ्रांसीसी राजनेताओं की व्यापक प्रशंसा हासिल की थी, बल्कि फ्रांस-अमरीका के बीच सकारात्मक संबंधों को विकसित करने में भी अहम भूमिका निभाई थी। यह उसी के प्रयासों का नतीजा था कि अमरीकी क्रांति के लिए फ्रांस ने महत्त्वपूर्ण हथियारों की खेप भेजी थी। अमरीकी क्रांति के बाद बेंजामिन फ्रेंकलिन को अमरीका का पहला महाडाकपाल (पोस्टमास्टर जनरल) नियुक्त किया गया था। और फिर वह पेंसिल्वेनिया का राज्यपाल (1785 से 1788 तक) भी रहा था।

पेशेवर कुशलता में सुधार के उपाय—बेंजामिन फ्रेंकलिन की अद्भुत कहानी पढ़ने के बाद अब आप अपनी पेशेवर कुशलता को कैसे मापते हैं। हम उन्हीं लोगों की सराहना करते हैं, जिनकी पेशेवर कार्यकुशलता अव्वल होती है, चाहे वे कुशल

कारीगर हों, विश्व स्तरीय खिलाड़ी या सफल उद्यमी-व्यापारी। लेकिन सच्चाई यह है कि कार्यकुशलता या दक्षता के किसी भी क्षेत्र में प्रसिद्धि पाने के लिए आपको माइकल जोर्डन, बिल गेट्स या स्टीव जॉब्स बनने की आवश्यकता नहीं है। यदि आप अपनी कार्यकुशलता बढ़ाना चाहते हैं, तो आप निम्नलिखित उपायों को आजमा सकते हैं—

• **दैनिक प्रदर्शन करें**—एक बहुत पुरानी कहावत है कि हर वस्तु उसके पास आती है, जो प्रतीक्षा कराती है। लेकिन विडंबना यह है कि प्रतीक्षा करनेवालों को बस संयोग से, कुछ बचा-खुचा ही मिल पाता है, क्योंकि कार्य-सक्षम व परिश्रमी लोग पहले ही सबकुछ हथिया चुके होते हैं। इसीलिए उत्तरदायी लोगों से अपेक्षा की जाती है कि वे प्रतिदिन अपनी कार्यक्षमता का प्रदर्शन करें। वैसे उच्च कार्यक्षमतावाले लोग इससे भी एक कदम आगे जाते हैं। वे सिर्फ प्रकट रूप में ही कार्य-प्रदर्शन नहीं करते, बल्कि प्रतिदिन यह भूमिका निभाने के लिए तत्पर रहते हैं। फिर उन्हें कोई अंतर नहीं पड़ता कि वे कैसा महसूस कर रहे थे, उन्हें किस तरह की परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है और दूसरे लोग इस कार्य को करने में कितनी कठिनाइयाँ झेलते हैं। वे बस अपना कर्म करते हैं, क्योंकि वे अपनी कार्यक्षमता के उपयोग को अपनी आदत का हिस्सा बना चुके होते हैं।

• **निरंतर सुधार करें**—जैसा कि हम पढ़ चुके हैं कि बेंजामिन फ्रेंकलिन अपने क्रियाकलापों को किस प्रकार 13 गुण-योजनाओं से संचालित किया करता था, और तब तक करता रहा था, जब तक वे सारे गुण उसके स्वभाव का हिस्सा नहीं बन गए थे। तो उच्च स्तरीय कार्यक्षमता हासिल करने के लिए लगातार सीखने, आगे बढ़ने व सुधार की आवश्यकता होती है। इस लेखक से साक्षात्कार में हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के मेवाती घराना शैली के स्वनामधन्य गायक पं. जसराज ने कहा था कि वे अब भी नियमित रूप से अभ्यास करते हैं, जबकि उनकी उम्र 75 वर्ष से ऊपर हो चुकी थी। वह मानते थे कि निरंतर साधना के बिना किसी भी कला को प्रभावी नहीं रखा जा सकता था। अर्थात् चाहे आपमें कितनी भी उच्च स्तरीय पेशेवर कार्यक्षमता हो, लेकिन उसकी प्रभावी क्षमता को बनाए रखने और ऊपर ले जाने के लिए कठिन साधना की आवश्यकता होती है। और यह सब आपकी स्वेच्छा पर निर्भर करती है।

• **उत्कृष्टता का पालन करें**—आप किसी भी उच्च कार्यक्षमतावाले से मिलकर देखिए, वह हमेशा आपकी अपेक्षाओं पर खरा उतरेगा। ऐसे सक्षम लोग हमेशा उत्कृष्टता का पालन करते हैं। आप भी ऐसा कर सकते हैं। ध्यान रखें कि गुणवत्ता कभी भी अचानक नहीं आ जाती है। इसके लिए बुद्धिमत्तापूर्ण दिशा-निर्देश व कुशल कार्यनिष्पादन की आवश्यकता होती है। तो जो लोग अपने जीवन में हमेशा उत्कृष्टता का पालन करते हुए दिखते हैं, वे अपनी उच्चस्तरीय

कार्यक्षमता को नियमित रूप से प्रदर्शित करते हैं। और यह भी स्वैच्छिक प्रक्रिया ही है।

• **आशा से अधिक कार्य**—उच्च स्तरीय कार्यक्षमताओंवाले लोग हमेशा अतिरिक्त कार्य करते हैं। वे कभी भी पर्याप्त से संतुष्ट नहीं होते हैं और अपनी क्षमताओं के उच्चतम उपयोग के माध्यम से अधिक कार्य करते हैं। इसका मनोवैज्ञानिक कारण यह है कि उच्च कार्यक्षमतावाले लोग अतिरिक्त कार्य दूसरों को दिखाने के लिए नहीं करते, यह उनकी आदत होती है, वे केवल अपनी संतुष्टि के लिए उच्चतम कार्य-प्रदर्शन करते हैं। अर्थात् लगातार अधिक कार्य उच्च कार्यक्षमतावाले लोगों का स्वभाव बन जाता है। इसीलिए वे दूसरों की तुलना में अधिक कार्य करते हैं, उनसे काफी आगे निकल जाते हैं और दूसरे लोग उसे सफल मानने लगते हैं। लेकिन सफल लोगों से पूछकर देखिए कि वे इतना काम कैसे कर लेते हैं, तो वे यही कहेंगे कि वे तो बस अपनी पूरी क्षमता का उपयोग भर कर रहे थे।

• **दूसरों को प्रेरित करें**—उच्च स्तरीय कार्यक्षमताओंवाले लोग अपने काम के अलावा भी एक महत्त्वपूर्ण काम करते हैं और वह है—दूसरों को प्रेरित करना। और जो यह काम कर लेते हैं, वही कुशल संगठनकर्ता व प्रभावी नेतृत्वकर्ता बन जाते हैं। जो लोग अपनी कार्यक्षमताओं से दूसरों को प्रेरित नहीं कर पाते हैं, वे भले ही अपने कार्य के विशेषज्ञ हों, लेकिन किसी संगठन को नेतृत्व नहीं प्रदान कर सकते।

अपनी कार्यक्षमता का मूल्यांकन करें—जब आप किसी कार्य को संपादित करने लगते हैं, तब आपको भी अपनी कार्यक्षमता का पता चलता है। जब किसी कार्य को करने की बारी आती है, तो आपकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया क्या होती है? क्या आप उस कार्य को करने की तत्परता दिखाते हैं और फिर पूरे उत्साह के साथ उसे करते हैं? क्या आप उस कार्य के संभावित सर्वोच्च स्तर का प्रदर्शन कर पाते हैं? या फिर यों ही कभी-कभार संयोग से अपने आप कुछ अच्छा हो जाता है?

ध्यान रहे कि जब आप कार्यसक्षम लोगों के बारे में विचार करते हैं, तो आप वास्तव में मात्र तीन प्रकार के लोगों के बारे विचार करते हैं—1. जो देख सकते हैं कि क्या करने की आवश्यकता है; 2. जो ऐसा होना संभव करते हैं; और 3. जो जब महत्त्वपूर्ण हो, तब वैसा होने देते हैं। क्या जब आपके पेशे की बात आती है, तो आप भी ऐसे ही अपना कार्य-प्रदर्शन करते हैं? याद रखें कि आपका उत्कृष्ट पक्ष आपको प्रभावित करनेवाली सर्वोच्च संभावना आपके अपने पास व आपके ही लोगों के साथ है।

वैसे अपनी कार्यक्षमता को बढ़ाने के लिए आप निम्नलिखित बातों को ध्यान में रख सकते हैं।

• **अपना पूरा मन लगाएँ**—यदि आपका मन अपने स्वाभाविक कार्य से उचट गया है, आप मानसिक या भावनात्मक रूप से कट गए हैं, तो अब समय आ गया है कि आप फिर से उसमें अपना मन लगाएँ। मनुष्य के मन की स्थिति बंदरों जैसी होती है, यह बहुत चंचल होता है, यह इधर-उधर भागता फिरता है। इसीलिए सबसे पहले फिर से स्वयं को अपने स्वाभाविक कार्य के बारे में समझाएँ। उस कार्य पर अपना पूरा ध्यान केंद्रित करें। हाँ, अब आपको यह भी पता लगाना है कि पहले आपका मन इस कार्य से क्यों उचट गया था? क्या आप उस काम से ऊब गए थे? क्या आपको नई चुनौतियों की आवश्यकता है? क्या आप जो काम कर रहे हैं, उसमें आगे प्रगति के सभी रास्ते बंद हो चुके हैं? जब आप इन प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने की कोशिश करेंगे तो आपको अपनी समस्या की जड़ का भी पता चल जाएगा और फिर आप उसके समाधान की योजना भी बना सकेंगे।

• **मानदंडों को पुनर्परिभाषित करें**—कई बार आप अपने स्वाभाविक कार्य को पूरी कार्यक्षमता से करते हैं, फिर भी परिणाम के रूप में उसकी सर्वोच्च संभावनाएँ सामने नहीं आती हैं। ऐसा इसलिए होता है कि आपने अपने मानदंडों को नए रूप में परिभाषित नहीं किया है। जब आप अपनी कार्यशैली की बारीकी से समीक्षा करेंगे, तो आपको पता चलेगा कि आप तो बहुत ही निचले स्तर का निशाना साध रहे थे। क्या आप सचमुच में ऐसी गलतियाँ करते रहे हैं? यदि हाँ, तो आपको अपनी मानसिक प्रक्रिया को बिल्कुल नए सिरे से पुनर्गठित करना पड़ेगा। पुरानी सोच को पूरी तरह से बदलना होगा। फिर आप अपने लिए पहले से अधिक उच्च स्तरीय लक्ष्यों व अपेक्षाओं का निर्धारण कर सकेंगे।

• **सुधार के तीन मार्ग खोजें**—क्या आपके सुधार के सभी मार्ग आपके स्वयं के पास ही हैं? जी हाँ, कोई भी व्यक्ति स्वयं की इच्छा के बिना कोई सुधार नहीं कर सकता और न ही सुधार की प्रक्रिया को आगे ही बढ़ा सकता है। चूँकि आपने अपने जीवन के मूल उद्देश्य की पहचान कर ली है और उसी दिशा में आगे बढ़ने के लिए स्वाभाविक कार्य कर रहे हैं, तो आपको उस कार्य की पेशागत कुशलताओं को भी सुधारना पड़ेगा। अब आपको गहराई से उन तीन सबसे प्रमुख कार्यक्षमताओं का पता लगाना होगा, जो उस कार्य को सर्वोच्च संभावनाओं तक पहुँचाने के लिए अत्यावश्यक हैं। फिर आप उन्हीं तीन क्षमताओं के विकास पर अपना पर्याप्त समय व धन लगाएँ। ध्यान रखें, केवल अंधाधुंध दौड़ते जाने से कोई अपने गंतव्य तक नहीं पहुँच जाता। जब हम अपनी जीवन-यात्रा की जरूरतों को पहचानकर स्वयं का सुधार करेंगे, तो हमारा भटकाव खत्म होगा और हम सधे कदम आगे बढ़ा सकेंगे, जिसे सभी सफलता समझते हैं।

आपमें कितनी दृढ इच्छाशक्ति है?

सफलता के तीन मौलिक गुणों में दृढ इच्छाशक्ति (स्ट्रांग विल-पावर) बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यदि आपमें सामूहिक कार्यभावना के साथ-साथ पेशेवर कुशलता भी है, तो भी आप दृढ इच्छाशक्ति के बिना अपने उद्देश्य में सफल में नहीं हो सकते। तभी तो कहा जाता है कि हार माननेवाले कभी विजयी नहीं होते, और विजेता कभी हार नहीं मानते। तो सफलता के लिए आपका दृढनिश्चयी होना अनिवार्य है। दृढनिश्चयी होने के निम्नलिखित अर्थ होते हैं—

1. अपना सौ प्रतिशत प्रदान करना—दृढ इच्छाशक्तिवाला व्यक्ति अपनी सौ प्रतिशत कार्यक्षमता का उपयोग करता है। उसके पास जो कुछ भी होता है, वह उसे प्रदान कर देता है; न उससे अधिक, न कम। जिन लोगों में दृढ इच्छाशक्ति का अभाव होता है, वे सबसे बड़ी गलती इसका अर्थ निकालने में करते हैं; उन्हें लगता है कि दृढनिश्चयी बनने के लिए उन्हें अपनी कार्यक्षमता से भी अधिक प्रदान करना होगा। यही कारण है कि ऐसे लोग स्वयं को प्रेरित नहीं कर पाते। यह तो सहज ज्ञान की बात है कि कोई भी अपनी कार्यक्षमता से अधिक कैसे दे सकता है? और फिर अपनी संपूर्ण कार्यक्षमता को समर्पित करने में डर कैसा? लेकिन विडंबना ही तो यही है अधिकांश लोग अपने सहज ज्ञान का उपयोग ही नहीं करते, और अपने काम में अपनी पूरी कार्यक्षमता नहीं झोंकते। स्वाभाविक ही है कि जब आप अपना सर्वस्व झोंकने के लिए लिए तैयार नहीं हैं, तो फिर सफल होने की अपेक्षा भी कैसे कर सकते हैं? और जब आप अपने जीवन के मूल उद्देश्य के लिए सबकुछ अर्पित करने को तत्पर होते हैं, तो फिर सफलता आपसे दूर कैसे जा सकती है। तभी तो कहते हैं कि विजयी कभी हार नहीं मानते और हार माननेवालों की कभी जीत नहीं होती।

2. भाग्य के भरोसे नहीं बैठना—दृढनिश्चयी लोग अपनी सफलता के लिए भाग्य, विधाता या नियति पर भरोसा नहीं करते और न ही अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा करते हैं। वह एक बार जिस कार्य को ठान लेते हैं, तो उसे संपन्न करने के बाद ही दम लेते हैं। विशेष रूप से तब, जब परिस्थितियाँ कठिन होती हैं, दृढनिश्चयी लोग स्वयं को निरंतर कार्य में लगाए रखते हैं। वे जानते हैं कि कर्म से ही भाग्य बदलता है, सुअवसर प्राप्त होते हैं, सौभाग्य मिलता है। वे जीवन को युद्ध जैसा मानते हैं, जिसमें हथियार डालने का अर्थ मृत्यु है। और यह बात दृढनिश्चयी व्यक्तियों को उस बाकी भीड़ से अलग करता है, जो भाग्य के भरोसे हाथ-पर-हाथ धरे बैठे अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा करते रहते हैं।

तभी तो थॉमस एडिसन ने कहा था, हमारी सबसे बड़ी कमजोरी हार मानने में निहित होती है। सफल होने के लिए सबसे निश्चित तरीका हमेशा बस एक बार और कोशिश करना होता है। और एडिसन कहा करता था, मैं वहाँ से शुरू करता हूँ, जहाँ अंतिम आदमी छोड़ देता है। अर्थात् दृढनिश्चयी व्यक्ति की वह कोशिश अंतिम होती है, जब वह कार्य को सिद्ध कर लेता है, बाकी लोगों की तरह

असंभव समझकर उस कार्य को बीच में ही नहीं छोड़ता। नेपोलियन बोनापार्ट कहता था, असंभव केवल मूर्खों के शब्दकोश में पाया जानेवाला शब्द है।

3. थकना मना है—सफलता प्राप्त करना बहुत हद तक गोरिल्ला युद्ध जैसा ही है। इस युद्ध में जब आप थक जाएँ तो न बैठें, आप तब बैठें जब गोरिल्ला थक जाए। यदि आप अपने कार्य-समूह को जिताना चाहते हैं तो उसकी कार्यक्षमता को तब तक प्रेरित करते रहें, जब तक कि वह सफलता न हासिल कर ले। चाहे आप फुटबॉल, बास्केटबॉल या अन्य खेल-दल के कप्तान हैं, तो आपको प्रतियोगिता जीतने के लिए अपने साथी खिलाड़ियों को खेल समाप्त होने के अंतिम क्षणों तक उत्साहित बनाए रखना होगा। ऐसा देखने में आता है कि शुरुआती बढ़त कायम करनेवाला खेल-दल शिथिल पड़ने के कारण अंतिम क्षणों में प्रतियोगिता हार जाता है, जबकि उससे कमजोर दल अपने उत्साह को लगातार कायम रखते हुए जीत हासिल कर लेता है।

इसीलिए जीवन-यात्रा में अपने उत्साह को बनाए रखना और निरंतर कार्य करते रहना सबसे अधिक जरूरी है। कछुआ-खरगोश की कहानी आपने भी पढ़ी ही होगी; भले ही खरगोश जैसी तेज दौड़ने की आपकी कार्यक्षमता न हो, लेकिन कछुआ जैसा कभी न थकनेवाला दृढ संकल्प हो, तो धीरे-धीरे ही सही, आप अपने गंतव्य तक पहुँच ही जाएँगे। सफलता का मूल मंत्र ही बिना थके अपने मूल उद्देश्य की दिशा में लगातार आगे बढ़ते जाना है।

तो आप कितने दृढनिश्चयी हैं? जब दूसरे लोग हार मान लेते हैं, तो भी आप डटे रह पाते हैं? जब सभी खिलाड़ी मैदान से बाहर जा चुके हैं और अब मुकाबला आपके व प्रतिपक्ष के खिलाड़ी के बीच का है, तो कौन जीतेगा? आप या वह? क्या आप अंतिम क्षणों में अपनी पूरी ताकत झोंकने को तैयार हैं? क्या खेल जीतना आपके जीवन-मरण का प्रश्न है? यदि हाँ, तो आपको जीतने से कोई भी नहीं रोक सकता। याद रखें कि जीवन के हर खेल में जीत का मूल तत्त्व है, दृढ इच्छाशक्ति। और तभी कहा जाता है कि बिना मरे स्वर्ग नहीं मिलता। जी हाँ, जीतने की आकांक्षा रखनेवाले जान की बाजी लगाने में भी नहीं हिचकते, क्योंकि हार मान लेना भी उनके लिए मृत्यु ही होती है।

❑

5

सफलता की अंतिम तैयारी

अब आप अपनी सफलता-यात्रा शुरू करने की तैयारियों के अंतिम चरण में हैं। अब तक आप सफलता की वास्तविक अवधारणा, मानव जीवन के मूल्य उद्देश्य, स्वयं की क्षमता का विकास, सपनों के महत्त्व, विफलता की भूमिका व सफलता में मौलिक गुणों की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। जन्म के साथ ही आपकी जीवन-यात्रा बहुत पहले ही शुरू चुकी है। हो सकता है कि आप अपने जीवन के मूल उद्देश्य को अर्थात् सफलता को प्राप्त करने की दिशा में आगे भी बढ़ रहे हों। यदि हाँ, तब भी पिछले अध्यायों में दी गई जानकारियों के आधार पर अपनी अब तक की सफलता-यात्रा की समीक्षा करें और आवश्यक सुधार करें।

अब आप सफलता प्राप्त करने के लिए दृढ-संकल्पित हो चुके हैं। लेकिन इस महान् यात्रा को पूर्ण आत्मविश्वास के साथ शुरू करने से पहले आपको कुछ प्रश्नों के सही उत्तर जान लेना नितांत आवश्यक है। क्या आप वास्तव में कठिन कार्यों के लिए तत्पर हो चुके हैं? यदि आपने कोई कार्य-योजना बनाई है, तो आप सचमुच उसके कार्यान्वयन के लिए तैयार हैं? क्या आप अपनी सफलता के अगले स्तर पर पहुँचने के लिए दूसरों की सफलता-यात्राओं का भी नेतृत्व करने के लिए तैयार हैं? इन प्रश्नों के सटीक उत्तर आपकी दूर-दृष्टि को और भी सुस्पष्ट कर देंगे और पूरी तैयारी के साथ निडर होकर अपनी अनंत सफलता-यात्रा पर निकल सकेंगे।

कठिन कार्यों को करने की तत्परता

आपको यह जानकर सुखद आश्चर्य होगा कि सफल लोग कोई अनोखा कार्य नहीं करते। तो फिर वे क्या करते हैं? वे विफल लोगों द्वारा कठिन मानकर छोड़ दिए गए कार्यों को करते हैं। अर्थात् लगभग सभी लोग जानते हैं कि किन कार्यों से सफलता मिल सकती है। लेकिन अधिकतर लोग उन कार्यों के प्रति अनिच्छा दिखाते हैं, क्योंकि वे कार्य आसान नहीं होते। जी हाँ, कठिन कार्यों को करने की तत्परता ही व्यक्ति विशेष को सफल बनाती है। अब तक आपको भी पूरी तरह समझ आ गया होगा कि आपकी स्वाभाविक कार्यकुशलता क्या है, अर्थात् आप किन कार्यों को अपेक्षाकृत अधिक आसानी से कर पाने में सक्षम हैं। तो फिर उन कार्यों को करने में हिचकिचाहट क्यों? क्योंकि आपको पता है कि स्वाभाविक होते हुए भी उन कार्यों को सफलता की हद तक पहुँचाने के लिए आपको बहुत कुछ त्याग करना पड़ेगा और अनुमान से कुछ अधिक समय तक कठिन साधना भी करनी पड़ेगी। तो क्या सोच रहे हैं आप, विफल लोगों की

भीड़ में शामिल रहते हुए गुमनाम ही बने रहना चाहते हैं या फिर सफल होकर आनेवाली पीढ़ी का मार्गदर्शन करना चाहते हैं? सबकुछ केवल आपकी स्वेच्छा पर निर्भर है। लेकिन इस विषय पर आगे बढ़ने से पहले मनुष्य की महानता, उसके कर्म व कर्तव्य के आध्यात्मिक रहस्य को जानना आवश्यक है।

मनुष्य की महानता का रहस्य—स्वामी विवेकानंद ने कर्मयोग संबंधी अपने व्याख्यान में घोषित किया है कि हरेक व्यक्ति अपने क्षेत्र में महान् है। वह कहते हैं—हमारा पहला कर्तव्य यह है कि हम अपने प्रति घृणा न करें। क्योंकि आगे बढ़ने के लिए आवश्यक है कि पहले हम स्वयं में विश्वास रखें और फिर ईश्वर में, जिसे स्वयं में विश्वास नहीं, उसे ईश्वर में कभी भी विश्वास नहीं हो सकता। अतः हमारे लिए जो एकमात्र रास्ता रह जाता है, वह यह है कि हम समझ लें कि कर्तव्य व नैतिकता की धारणा विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है। यह बात नहीं कि जो मनुष्य अन्याय (ईविल) का प्रतिरोध कर रहा है, वह कुछ ऐसा करता है, जो हमेशा व अपने आपमें गलत है, बल्कि जिन भिन्न परिस्थितियों में वह है, उनमें बुराई का प्रतिरोध करना ही उसका कर्तव्य हो सकता है।

इस संदर्भ में स्वामी ने श्रीमद्भगवद्गीता के दूसरे अध्याय में वर्णित उस घटना का उल्लेख किया है, जब युद्ध के मैदान में शत्रुओं के मित्र व संबंधी होने के कारण अर्जुन ने उनसे युद्ध करना अस्वीकार कर दिया था और अप्रतिरोध (नॉन रेसिस्टेंट) को ही प्रेम का सबसे ऊँचा आदर्श बताया था, तब श्रीकृष्ण ने उसे ढोंगी व डरपोक कहा है। स्वामीजी ने अमरीकी नागरिकों को संबोधित करते हुए सावधान किया था कि पश्चिमी देशवालों को यह पढ़कर बहुत आश्चर्य भी हो सकता है। उन्होंने कहा था, ''इस महान् पाठ को हम सभी को सीख लेना चाहिए कि सभी विषयों में चरम अवस्थाएँ (एक्सट्रीम) एक जैसी होती हैं। चरम सकारात्मक (एक्सट्रीम पॉजिटिव) व चरम नकारात्मक (एक्सट्रीम निगेटिव) हमेशा एक समान होते हैं। उदाहरण के लिए जब प्रकाश का स्पंदन (वाइब्रेशन ऑफ लाइट) अत्यंत मंद होता है, तब हम उसे नहीं देखते हैं, और न ही जब वह अत्यंत तीव्र होता है। ध्वनि (साउंड) के बारे में भी ठीक ऐसा ही है। न तो उसके तार-स्वर के बहुत निम्न होने पर हम सुन सकते हैं और न ही उसके बहुत उच्च होने पर। इसी प्रकार का अंतर प्रतिरोध (रेसिस्टेंट) व अप्रतिरोध (नॉन-रेसिस्टेंट) में है। एक मनुष्य इसलिए प्रतिरोध नहीं करता कि वह कमजोर है। सुस्त है, असमर्थ है; दूसरी ओर एक दूसरा मनुष्य है, जो यह जानता है कि यदि वह चाहे, तो प्रतिरोध न कर सकने योग्य प्रहार कर सकता है; लेकिन फिर भी वह केवल अप्रतिरोध ही नहीं करता, बल्कि वह शत्रुओं को आशीर्वाद भी देता है। इसीलिए वह मनुष्य जो दुर्बलता के कारण प्रतिरोध नहीं करता, वह पाप करता है, और ऐसा मनुष्य अप्रतिरोध से लाभ नहीं उठा सकता; जबकि दूसरा मनुष्य प्रतिरोध करे तो वह पाप का भागी होगा।''

स्वामीजी ने विषय को और अधिक स्पष्ट करते हुए आगे कहा है, ''बुद्ध ने जो अपना सिंहासन छोड़ा था और अपना राजपद त्यागा था, वह सच्चा त्याग था; लेकिन एक भिखारी के संबंध में त्याग का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि उसके पास त्याग करने को कुछ है ही नहीं। इसीलिए जब हम अप्रतिरोध (नॉन-रेसिस्टेंट) व आदर्श प्रेम (आइडियल लव) की बात करते हैं, तब हमें हमेशा अवश्य सावधान रहना चाहिए कि वास्तव में हमारा तात्पर्य क्या है। पहले हमें समझने के लिए अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि हमारे पास प्रतिरोध करने की शक्ति है भी या नहीं। तब शक्तिशाली होते हुए भी यदि हम इसका त्याग कर देते हैं और प्रतिरोध नहीं करते हैं, तब हम प्रेम का महान् कार्य करते हैं। लेकिन यदि हम प्रतिरोध नहीं कर सकते हों और फिर भी स्वयं को इस विश्वास के भ्रम में रखने की कोशिश करते हों कि हम सर्वोच्च प्रेम की प्रेरणा से कार्य कर रहे हैं, तो हम बिल्कुल विपरीत कर रहे हैं। अपने विपक्ष में शक्तिशाली सेना को खड़ी देखकर अर्जुन कायर हो गया था; उसके प्रेम ने उसे अपने देश व राजा के प्रति अपने कर्तव्य को भुला दिया था। इसीलिए तो श्रीकृष्ण ने उससे कहा था कि तू ढोंगी है—तू बुद्धिमान आदमी की तरह बात तो करता है, लेकिन तुम्हारे कर्म उसे कायर होने के लिए धोखा देते हैं; इसीलिए उठ खड़े हो जाओ और युद्ध करो!''

स्वामी ने जोर देकर कहा है, ''यही कर्मयोग का केंद्रीय भाव है। कर्मयोगी वही है, जो समझता है कि सबसे ऊँचा आदर्श अप्रतिरोध है, और जो जानता है कि यह अप्रतिरोध ही मनुष्य की वास्तविक कब्जेदारीवाली शक्ति की उच्चतम अभिव्यक्ति (मेनिफेस्टेशन) है और जो यह भी जानता है कि जो अन्याय का प्रतिरोध कहा जाता है, वह और कुछ नहीं, बल्कि अप्रतिरोध नामक इस उच्चतम शक्ति की अभिव्यक्ति की ओर जानेवाले मार्ग का एक कदम मात्र है। इस सर्वोच्च आदर्श तक पहुँचने से पहले मनुष्य का कर्तव्य है अन्याय का प्रतिरोध करना; पहले उसे कर्म करने दो, उसे युद्ध करने दो, उसे पूरी शक्ति से प्रतिद्वंद्विता करने दो। तब ही जब उसमें प्रतिरोध करने की शक्ति आ जाती है, अप्रतिरोध उसका गुण-स्वरूप होगा।

इस संदर्भ में स्वामी विवेकानंद ने अपने जीवन की रोचक कहानी सुनाई है। स्वामीजी की एक व्यक्ति से भेंट हुई, जिसे वह पहले से ही जानते थे कि वह आलसी व बुद्धिहीन है। वह न तो कुछ जानता था और न ही उसकी कोई जानने की आकांक्षा ही थी। वह पशुओं की तरह अपना जीवन बिता रहा था। उसने स्वामीजी से प्रश्न किया था, ''भगवान् की प्राप्ति के लिए मुझे क्या करना चाहिए? मुझे किस प्रकार मुक्ति (फ्रीडम) मिल सकेगी?'' तब स्वामी ने उससे पूछा था, ''क्या तुम झूठ बोल सकते हो?'' उसने उत्तर दिया था, ''नहीं।'' तब स्वामीजी ने कहा था, ''तब तुम पहले झूठ बोलना सीखो। पशुओं की तरह या लकड़ी जैसा जीवन जीते रहने की तुलना में झूठ बोलना कहीं अच्छा है; तुम अकर्मण्य (इनएक्टिव) हो। निश्चित रूप से तुम उस सबसे ऊँची निष्क्रिय अवस्था

(स्टेट ऑफ इनएक्टिविटी) में नहीं पहुँचे, जो सब कर्मों से परे व शांतिपूर्ण होती है। और तो और तुम पर इतना अधिक जड़भाव चढ़ा हुआ है कि एक बुरा कार्य करने की भी तुममें शक्ति नहीं है।'' इस कहानी के माध्यम से स्वामीजी ने हमें बताने की कोशिश की है कि संपूर्ण निष्क्रिय अवस्था या शांति भाव प्राप्त करने के लिए भी मनुष्य को कर्मशीलता (एक्टिविटी) से होकर गुजरना पड़ता है।

स्वामीजी ने आगे कहा है, हर प्रकार की कोशिशों से निष्क्रियता से बचना चाहिए। क्रियाशीलता (एक्टिविटी) का हमेशा अर्थ होता है प्रतिरोध। मानसिक व शारीरिक, सभी प्रकार की बुराइयों का प्रतिरोध करो, जब तुम प्रतिरोध करने में सफल होगे, तभी शांति आएगी। यह कहना बड़ा आसान है कि किसी से घृणा मत करो, किसी अन्याय/बुराई का प्रतिरोध न करो, लेकिन हम जानते हैं कि कार्यरूप में ऐसी बातों का आमतौर पर क्या अर्थ होता है। जब सारे समाज की आँखें हमारी ओर लगी हों, तो हम भले ही अप्रतिरोध का प्रदर्शन करते हों, लेकिन यह हमारे हृदय को हमेशा कुरेदती रहती है। हम अप्रतिरोध की शांति का चरम अभाव महसूस करते हैं; हमें लगता है कि प्रतिरोध करना ही हमारे लिए अधिक अच्छा होगा। यदि तुम्हें धन की इच्छा है और साथ ही तुम्हें यह भी मालूम है कि जो मनुष्य धन को लक्ष्य कर रहा है, उसे सारा संसार बहुत दुष्ट आदमी समझता है, तो संभव है, तुम धन के लिए संघर्ष में छलाँग लगाने की हिम्मत नहीं करोगे; फिर भी तुम्हारा मन दिन-रात धन के पीछे-पीछे ही दौड़ता रहेगा। यह पाखंड है, और इससे कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा। संसार में कूद पड़ो और एक समय बाद जब तुम उसमें जो है, उसे (दुःख) भुगत लेते हो और (सुख) आनंद ले लेते हो, तभी त्याग आएगा। इसीलिए अपनी सत्ता व अन्य सभी चीजों की इच्छा को पूरी कर लो; और जब तुम अपनी इच्छाएँ पूरी कर लेते हो, तब समय आएगा, जब तुम जान जाओगे कि वे सब चीजें बहुत छोटी हैं। लेकिन जब तक तुम्हारी यह इच्छा पूरी नहीं हो जाती है, जब तक उस कर्मशीलता (एक्टिविटी) में से होकर गुजर नहीं जाते हो, तब तक तुम्हारे लिए शांतिभाव (कामनेस), निस्तब्धता (सेरेनिटी) व आत्म-समर्पण (सेल्फ सरेंडर) की अवस्था में आना असंभव है। निस्तब्धता व त्याग के इन विचारों का प्रचार हजारों वर्षों से होता आ रहा है; प्रत्येक व्यक्ति इसके बारे में बचपन से सुनता आया है और फिर भी आज संसार में हमें ऐसे बहुत कम लोग दिखाई देते हैं, जो उस स्थिति तक पहुँच सके हों। मैंने लगभग आधे संसार का भ्रमण कर डाला है, लेकिन मुझे शायद ऐसे 20 व्यक्ति भी नहीं मिले, जो वास्तव में शांत व अप्रतिरोधी प्रकृतिवाले हों।

और फिर स्वामीजी बताते हैं, प्रत्येक मनुष्य को स्वयं आदर्श लेना चाहिए और उसे पूरा करने के लिए प्रयास करना चाहिए। दूसरों के वैसे आदर्शों को लेकर चलने की अपेक्षा, जिसे वह कभी भी पूरी करने की आशा नहीं कर सकता, अपने आदर्श का अनुसरण करना सफलता का अधिक निश्चित मार्ग है। स्वामीजी ने

इस गूढ़ रहस्य को समझाने के लिए रोचक उदाहरण प्रस्तुत किया है। वह कहते हैं, ''यदि हम एक छोटे बच्चे से एकदम 20 मील चलने को कह दें, तो या तो वह बेचारा मर जाएगा या यदि हजार में से कोई रेंगता हुआ 20 मील तक पहुँच भी जाए, तो वह थककर चूर व अधमरा हो जाएगा। यह उसी तरह है, जैसा हम संसार के साथ आमतौर पर करने की कोशिश करते हैं। किसी भी समाज के सभी स्त्री-पुरुष चीजों को करने के लिए न एक मन के होते हैं, न एक ही योग्यता के और न ही एक शक्ति के। उनमें से अवश्य ही प्रत्येक का आदर्श भी भिन्न-भिन्न होना चाहिए और हमें किसी भी आदर्श का उपहास करने का कोई अधिकार नहीं है। अपने आदर्श को साकार करने के लिए प्रत्येक को जितना भी अधिक-से-अधिक वह कर सकता हो, करने दो। फिर यह भी ठीक नहीं है कि मैं तुम्हारे या तुम मेरे आदर्श द्वारा जाँचे जाओ। सेब के पेड़ की तुलना ओक से नहीं करनी चाहिए और न ओक की सेब से, सेब के पेड़ की जाँच करने के लिए तुम्हें अवश्य ही सेब का मापक लेना चाहिए और ओक के लिए उसका अपना मापक।''

अब स्वामीजी हमें विभिन्नता में एकता का रहस्य बताते हैं, 'बहुत्व (वेरायटी) में एकत्व (यूनिटी) ही सृष्टि (क्रिएशन) का विधान (प्लान) है। हालाँकि स्त्री व पुरुष व्यक्तिगत रूप से भिन्न हों सकते हैं, लेकिन उन सबकी पृष्ठभूमि में एकत्व है। सृष्टि में स्त्रियों व पुरुषों के भिन्न-भिन्न व्यक्तिगत चरित्र (कैरेक्टर) व वर्ग (क्लास) स्वाभाविक विविधताएँ हैं। इसीलिए हमें एक ही मापदंड द्वारा उनकी परख नहीं करनी चाहिए या सबके सामने एक ही आदर्श नहीं रखना चाहिए। ऐसी कार्य-प्रणाली केवल एक अस्वाभाविक संघर्ष की रचना करती है और फल यह होता है कि मनुष्य स्वयं से ही घृणा करने लगता है, और धार्मिक व अच्छा बनने से बाधित हो जाता है। हमारा कर्तव्य तो यह है कि हम प्रत्येक को उनके उच्चतम आदर्श के साथ जीने के संघर्ष को प्रोत्साहित करें और उस आदर्श को सत्य के जितना नजदीक हो सके, लाने की जी-तोड़ चेष्टा करें।

इस तरह अब हमारे सामने स्पष्ट हो चुका है कि हम जो भी हैं, जैसे भी हैं, सबकुछ सृष्टि का विधान है। हम अपने आपमें संपूर्ण हैं, और हमें जो कुछ भी स्वाभाविक लगता है, वही हमारे जीवन का मूल उद्देश्य है, और हमें उसे पूरा करने के लिए लगातार संघर्ष करते रहना चाहिए। यही हमारे सत्य का, सफलता का मार्ग है। आइए, अब देखते हैं कि सफल लोग क्या कुछ करते हैं।

तो, क्या करते हैं सफल व्यक्ति?

हमने ऊपर पढ़ा है, जो विफल लोग करने को अनिच्छुक होते हैं, वही सफल व्यक्ति करते हैं। इस कथन का क्या अर्थ है? अपने आस-पास के लोगों पर नजर दौड़ाइए और देखिए कि अधिकांश लोग क्या करते हैं और क्या नहीं करते हैं। आपको जल्द ही पता चल जाएगा कि अधिकांश लोग नौकरी (जॉब) करते हैं, अर्थात् दूसरों के लिए काम करते हैं, दूसरों के आदेश का पालन करते हैं और

दूसरों के पीछे-पीछे चलते हैं। कुछ लोग हैं, जो अकेले या बहुत छोटे से समूह में काम करते हैं और ऐसे लोग गिने-चुने हैं, जो दूसरों को काम देते हैं और उनका नेतृत्व करते हैं। तो क्या नौकरी करना इतना बुरा है? बिल्कुल नहीं, यदि आप समझते हैं कि आप इसी के योग्य हैं और आप यही कर सकते हैं। आपको इस कार्य में सफलता मिल सकती है, शर्त सिर्फ इतनी है कि आप स्वयं की तुलना दूसरों से न करें और जो भी कर रहे हैं, उसे पूरे मन से करें। लेकिन यहाँ पर हम जिस बड़ी सफलता की बात कर रहे हैं, उसकी संभावना तो सभी में है, लेकिन अधिकतर लोग अपनी महान् क्षमता को पहचान ही नहीं पाते। वास्तविकता यह है कि अधिकतर लोग स्वयं को पहचानने की कोशिश ही नहीं करते और वे जैसे भी हैं, वैसे ही बने रहना चाहते हैं।

अब आपको पता चल जाना चाहिए कि सफल लोग क्यों वह काम करते हैं, जो विफल लोग नहीं करना चाहते हैं। विफलता का तात्पर्य है अपने जीवन के मूल उद्देश्य को न पहचानना और दूसरों से तुलना कर स्वयं को असंतुष्ट व बेचैन रखना। ऐसे लोगों को किसी-न-किसी का अनुसरण करना पड़ता है, क्योंकि वे स्वयं का अनुसरण नहीं कर पाते। विडंबना यह है कि विफल लोग ठीक प्रकार से दूसरों का अनुसरण भी नहीं कर पाते, अपने उस कर्तव्य से भी चूक जाते हैं और फिर अपने भाग्य को कोसने के अलावा कुछ नहीं कर पाते। जो लोग अपनी स्वाभाविक कार्यक्षमता को समझ लेते हैं, और दूसरों के नेतृत्व में ही सही, उस कार्य को ठीक प्रकार से करते हुए अपना विकास करते हैं, वे सफल पेशेवर कहलाते हैं। पेशेवर सफलता के अलग-अलग स्तर हैं। अधिकांश लोग अपनी सीमाओं से बाहर जाने का जोखिम नहीं उठाते, लेकिन अपनी सीमाओं में रहते हुए अपनी भूमिका निभाने में चूक भी नहीं करते। ऐसे लोग दूसरों से अपनी तुलना भी नहीं करते, इसीलिए किसी से ईर्ष्या भी नहीं करते और सभी एक साथ सहयोग की भावना से काम करते हैं। ऐसे लोग सफल कार्य-समूह सदस्य (टीम मेंबर) कहलाते हैं। लेकिन हम यहाँ पर जिन सफल लोगों की बात कर रहे हैं, वे केवल अपनी ही चिंता नहीं करते, बल्कि दूसरों का उत्तरदायित्व उठाते हैं और उनके साथ मिलकर कठिन कार्यों को करने में आनंद लेते हैं। इसीलिए ऐसे लोग अपने कार्यों से दूसरों पर प्रभाव डालने की स्थिति में होते हैं।

स्पष्ट है कि जब आप अपनी व्यक्तिगत क्षमता के दायरे से बाहर निकलकर दूसरों की क्षमता का उपयोग कर पाने की हिम्मत जुटाते हैं, तो फिर आप अपनी सफलता से पहले अपने साथ चलनेवालों की सफलता की चिंता करते हैं। क्योंकि आपको पता है कि आपकी सफलता पूरे समूह की सफलता पर निर्भर है। और जब आप ऐसा कर पाने में स्वयं को सक्षम बना लेते हैं, तो सफल नेतृत्वकर्ता कहलाते हैं। लेकिन इसके लिए नेतृत्वकर्ता को बहुत कुछ करना पड़ता है, जो इस प्रकार है—

• **कठिन कार्यों को करना पड़ता है**—कठिन कार्यों को करने की क्षमता ही व्यक्ति विशेष को दूसरों से सम्मान दिलाता है। यदि आप नेतृत्व की कमान जल्दी से अपने हाथों में लेना चाहते हैं, तो उसका एक ही रास्ता है—समस्या का समाधान। आमतौर पर कार्यालय, घर व जीवन में समस्याएँ आती रहती हैं। यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि किसी को भी समस्या पसंद नहीं आती। हाँ, अधिकांश लोग अपनी समस्याओं से जल्द ही व्यग्र हो उठते हैं, उससे छुटकारा पाने के लिए कुछ कर लेते हैं। लेकिन समाज के कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो अपनी समस्याओं के साथ-साथ दूसरों की समस्याओं को सुलझाने में मदद करने की हिम्मत व दमखम रखते हैं। इसीलिए अधिकांश लोग ऐसे अतिरिक्त क्षमतावान् लोगों का अनुसरण करते हैं, और ये लोग नेतृत्वकर्ता मान लिये जाते हैं। चूँकि जनसाधारण की समस्याएँ कभी भी खत्म नहीं हो पाएँगी, इसीलिए हमेशा ही नेतृत्वकर्ताओं की आवश्यकता बनी रहेगी।

जब आप कठिन कार्यों को हाथ में लेते हैं, तो उससे न केवल दूसरों का सम्मान मिलता है, बल्कि आपको अपनी नेतृत्व क्षमता को बढ़ाने का अवसर मिलता है। कठिन कार्यों को करते हुए ही आप लचीलापन (फ्लेक्सिबिलिटी) व दृढता (फर्मनेस) जैसे गुण सीख पाते हैं। ये दोनों ऐसे गुण हैं, जो कभी भी आसानी से नहीं सीखे जा सकते। इसीलिए यह कहा जाता है कि सोना तपकर कुंदन बनता है। आपको सफल नेतृत्वकर्ता बनना है, तो आपको कठिन कार्यों की भट्ठी में तपना ही पड़ेगा। यह कोई आसान राह नहीं है, इसीलिए अधिकांश लोग अनुगामी या पीछे-पीछे चलनेवाला (फॉलोअर) बनना पसंद करते हैं।

• **सफलता का मूल्य चुकाना पड़ता है**—जीवन में आपको जो कुछ भी मिलता है, उसके लिए उचित मूल्य चुकाना पड़ता है, कई बार कुछ अधिक मूल्य भी। क्योंकि हरेक चीज का एक मूल्य होता है। इसलिए आप सफल व्यक्ति बनना चाहते हैं, तो आपको उसका मूल्य भी चुकाना ही पड़ेगा। इस संसार में कुछ भी मुफ्त नहीं मिलता, क्योंकि हरेक चीज की एक निश्चित लागत होती है। इसीलिए जब आप नेतृत्व करना चाहते हैं, तो आपको अपने बाकी विकल्पों को छोड़ना ही पड़ेगा; अपने कुछ व्यक्तिगत उद्देश्यों को दूसरों के लिए (अपने अनुगामियों के लिए) छोड़ना ही पड़ेगा; अपने आपको आरामदायक माहौल से बाहर निकालना ही पड़ेगा; और कुछ ऐसा करना पड़ेगा, जो पहले किसी ने न किया हो। ऐसा करते हुए आपको कई तरह की समस्याओं से जूझना पड़ेगा; कई बार आपको ऐसा भी लगेगा कि पीछे लौट जाऊँ; लेकिन सफलता की राह पर पीछे लौटना संभव नहीं है।

आपने मिर्जा गालिब की शायरी पढ़ी होगी, 'ये इश्क नहीं आसाँ, इतना समझ लीजै; इक आग का दरिया है, और डूब के जाना है।' सफलता भी इश्क जैसी ही होती है, जिसके लिए आग के दरिया में डूबकर जाना पड़ता है। एक बार आप सफलता की राह पर चल देते हैं, तो आपको निरंतर सीखना पड़ता है, चलने

का अनुभव आपको सीखने का विषय बताता है और आप सीखकर आगे बढ़ते जाते हैं। कुछ समय बाद सफलता की कठिनाइयों से जूझना आपकी आदत बन जाती है और आपके लिए सबकुछ सामान्य सा हो जाता है। आपको हमेशा ही स्वयं से पहले दूसरों को प्राथमिकता देनी पड़ती है। और जब आप सफल नेतृत्वकर्ता बनने की हार्दिक इच्छा रखते हैं, तो आपको बिना किसी उत्सव के या फिर उलाहना दिए बिना ही यह सबकुछ करने के लिए तत्पर रहना पड़ता है। क्योंकि सफलता की राह आपने स्वयं चुनी है, तो यह सब तो उसका हिस्सा है।

• **कठिनाइयों के बीच काम करना पड़ता है**—जब आप दूसरों की कठिनाइयों के समाधान करने निकले हैं, तो आपको भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। क्यों कठिनाइयाँ जीवन का हिस्सा हैं। स्वामी विवेकानंद का विचारोत्तेजक कथन है, ''एक दिन में यदि तुम किसी समस्या को पार नहीं करते हो तो तुम निश्चित हो सकते हो कि तुम गलत रास्ते पर यात्रा कर रहे हो।'' साथ ही स्वामीजी यह भी कहते हैं, ''हमें निरंतर अभ्यास से कठिनाई को दूर करना होगा। हमें सीखना होगा कि हमारे साथ कुछ भी नहीं हो सकता, जब तक कि हम स्वयं को उसके लिए अति संवेदनशील न बना दें।'' स्पष्ट है कि कठिनाइयाँ स्वाभाविक हैं और जब हम सफलता की राह पर आगे बढ़ रहे हैं, तो हमें उनसे लगातार संघर्ष करना पड़ेगा और उनका समाधान भी निकालना पड़ेगा। यही तो जीवन का अनुभव है, और इसीलिए सफल व्यक्ति दूसरों की तुलना में ज्यादा अनुभव प्राप्त करते हैं और अधिक बुद्धिमान होते हैं।

इतना ही नहीं, सफल नेतृत्वकर्ता अपने मार्ग में अहंभाव (ईगो) को नहीं आने देते, क्योंकि वे समझते हैं कि हरेक कठिनाई का समाधान उसके पास नहीं हो सकता है। इसीलिए नेतृत्व के दौरान कई बार विफलताओं का भी सामना करना पड़ सकता है, और करना पड़ता ही है। अब प्रश्न यह उठता है कि कुशल नेतृत्वकर्ताओं की कौन सी बात उन्हें अपने अहंभाव से दूर रखती है। मेरा मानना है कि हरेक नेतृत्वकर्ता को अपने मार्ग में इसका उत्तर नहीं मिल पाता है। वैसे सफल नेतृत्वकर्ताओं के लिए अहंभाव से कोई समस्या भी नहीं आती है, क्योंकि वे कठिनाइयों में अपना सबकुछ दाँव पर लगाते हैं और सर्वोत्तम प्रदर्शन करने की कोशिश करते हैं। सफलता की राह पर आगे बढ़ते हुए वे पहले ही इतने धक्के खा चुके होते हैं कि उनका स्वयं का अहंभाव आड़े नहीं आता। और यदि उनका अहंभाव आड़े आता है, तो यह भी तय है कि वे सफल नेतृत्वकर्ता बन ही नहीं सकते।

• **सबको साथ लेकर चलना पड़ता है**—जब आप किसी संगठन का नेतृत्व करते हैं, तो आपको सबको साथ लेकर चलने की जरूरत होती है। चूँकि हरेक व्यक्ति विशेष का अपना स्वभाव होता है, इसीलिए सभी से यह अपेक्षा भी नहीं की जा सकती है कि वे आपकी हर बात को आँख मूँदकर स्वीकार करते रहें। यही कारण है कि सफल नेतृत्वकर्ता सभी को एक लाठी से हाँकने की गलती नहीं करते हैं।

वे व्यक्ति विशेष को उचित महत्त्व देते हैं और उसका दिल जीतने की कोशिश करते हैं। वैसे यह माना जाता है कि किसी संगठन के शीर्ष पर बैठे नेतृत्वकर्ता को अपना अनुगामी चुनने का अधिकार होता है, इसीलिए वे जिसे चाहें अपने साथ रखें, और जिसे नापसंद करें, उसे बाहर का रास्ता दिखा दें। आमतौर पर होता भी ऐसा ही है। अधिकांश नेतृत्वकर्ता अपने साथ उन लोगों को बरदाश्त नहीं कर पाते हैं, जिनके विचार उनके साथ नहीं मिलते हैं या जो उनकी हाँ में हाँ नहीं मिलाते। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि कोई नेतृत्वकर्ता कितने लोगों को नापसंद कर सकता है? और यदि वह इसी तरह लोगों को नापसंद करेगा, तो वह नेतृत्व किसका करेगा!

वास्तव में जो नेतृत्वकर्ता नीचे से ऊपर की ओर आगे बढ़ते हैं, उनके लिए यह समस्या ही नहीं आती है। चूँकि मध्यम स्तर के नेतृत्वकर्ताओं के पास आमतौर पर अपने लोगों को चुनने का विकल्प नहीं मिलता, इसीलिए वे अलग-अलग स्वभाव के व्यक्तियों के साथ मिलकर काम करना सीख जाते हैं। क्योंकि संगठन के लाभ के लिए सभी को साथ लेकर चलना भले ही अनिवार्य न हो, लेकिन महत्त्वपूर्ण अवश्य ही होता है। वैसे भी सफल नेतृत्वकर्ता को इससे कोई अधिक अंतर नहीं पड़ता, वे किन लोगों के साथ काम करते हैं, क्योंकि वे अपने विरोधियों व टेढ़े लोगों को अपना बनाना जानते हैं। और वे ऐसा इसलिए भी कर पाते हैं कि वे दूसरों को उनकी जगह पर छोड़ देने की बजाय अपने साथ लाने व उन्हें सफल बनाने की कोशिश करते हैं। यही नेतृत्व का मूल मंत्र है—दूसरों के हितों के लिए काम करना और जो नेतृत्वकर्ता लोगों के बीच यह विश्वास पैदा कर लेता है, तो सभी उसके पीछे चल पड़ते हैं; हाँ, विरोधी भी।

• **स्वयं को ही दाँव पर लगाना पड़ता है**—नेतृत्व करने व सफल होने की पहली शर्त ही है कि आप वह काम करें, जिसे दूसरे लोग कठिन मानकर छोड़ देते हैं। तो फिर यदि आप वास्तव में सफल होने को इच्छुक हैं और लोगों का नेतृत्व करने के लिए कृतसंकल्प हैं, तो आपको भीड़ से व अपने समकक्षों से अलग कुछ विशेष तो करना ही पड़ेगा। जी हाँ, मैं जोखिम उठाने की बात कर रहा हूँ। यदि आप स्वयं को खतरे में डालने की हिम्मत नहीं रखते और खुद को दूसरों की ही तरह सुरक्षित बनाए रखना चाहते हैं, तो दूसरों व आपके बीच अंतर क्या है? और यदि अंतर नहीं है, तो फिर दूसरे लोग आपका अनुसरण क्यों करें? याद रखें, लोग उसी व्यक्ति विशेष के पीछे चलते हैं, जो दूसरों के लिए स्वयं को दाँव पर लगाने का दम रखता है।

जब आप किसी व्यावसायिक संगठन में काम करते हैं, तो वहाँ जोखिम उठाना जटिल विषय होता है। जो आपका नहीं है, उसपर जोखिम उठाते हुए आपको लापरवाह होने की छूट नहीं मिलती। यह दूसरे के धन का दाँव होता है। आपके पास संगठन को दाँव पर लगाने का कोई अधिकार नहीं होता है। साथ ही आपका यह अधिकार भी नहीं होता कि संगठन में दूसरों के लिए कोई बड़ी

वे व्यक्ति विशेष को उचित महत्त्व देते हैं और उसका दिल जीतने की कोशिश करते हैं। वैसे यह माना जाता है कि किसी संगठन के शीर्ष पर बैठे नेतृत्वकर्ता को अपना अनुगामी चुनने का अधिकार होता है, इसीलिए वे जिसे चाहें अपने साथ रखें, और जिसे नापसंद करें, उसे बाहर का रास्ता दिखा दें। आमतौर पर होता भी ऐसा ही है। अधिकांश नेतृत्वकर्ता अपने साथ उन लोगों को बरदाश्त नहीं कर पाते हैं, जिनके विचार उनके साथ नहीं मिलते हैं या जो उनकी हाँ में हाँ नहीं मिलाते। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि कोई नेतृत्वकर्ता कितने लोगों को नापसंद कर सकता है? और यदि वह इसी तरह लोगों को नापसंद करेगा, तो वह नेतृत्व किसका करेगा!

वास्तव में जो नेतृत्वकर्ता नीचे से ऊपर की ओर आगे बढ़ते हैं, उनके लिए यह समस्या ही नहीं आती है। चूँकि मध्यम स्तर के नेतृत्वकर्ताओं के पास आमतौर पर अपने लोगों को चुनने का विकल्प नहीं मिलता, इसीलिए वे अलग-अलग स्वभाव के व्यक्तियों के साथ मिलकर काम करना सीख जाते हैं। क्योंकि संगठन के लाभ के लिए सभी को साथ लेकर चलना भले ही अनिवार्य न हो, लेकिन महत्त्वपूर्ण अवश्य ही होता है। वैसे भी सफल नेतृत्वकर्ता को इससे कोई अधिक अंतर नहीं पड़ता, वे किन लोगों के साथ काम करते हैं, क्योंकि वे अपने विरोधियों व टेढ़े लोगों को अपना बनाना जानते हैं। और वे ऐसा इसलिए भी कर पाते हैं कि वे दूसरों को उनकी जगह पर छोड़ देने की बजाय अपने साथ लाने व उन्हें सफल बनाने की कोशिश करते हैं। यही नेतृत्व का मूल मंत्र है—दूसरों के हितों के लिए काम करना और जो नेतृत्वकर्ता लोगों के बीच यह विश्वास पैदा कर लेता है, तो सभी उसके पीछे चल पड़ते हैं; हाँ, विरोधी भी।

• **स्वयं को ही दाँव पर लगाना पड़ता है**—नेतृत्व करने व सफल होने की पहली शर्त ही है कि आप वह काम करें, जिसे दूसरे लोग कठिन मानकर छोड़ देते हैं। तो फिर यदि आप वास्तव में सफल होने को इच्छुक हैं और लोगों का नेतृत्व करने के लिए कृतसंकल्प हैं, तो आपको भीड़ से व अपने समकक्षों से अलग कुछ विशेष तो करना ही पड़ेगा। जी हाँ, मैं जोखिम उठाने की बात कर रहा हूँ। यदि आप स्वयं को खतरे में डालने की हिम्मत नहीं रखते और खुद को दूसरों की ही तरह सुरक्षित बनाए रखना चाहते हैं, तो दूसरों व आपके बीच अंतर क्या है? और यदि अंतर नहीं है, तो फिर दूसरे लोग आपका अनुसरण क्यों करें? याद रखें, लोग उसी व्यक्ति विशेष के पीछे चलते हैं, जो दूसरों के लिए स्वयं को दाँव पर लगाने का दम रखता है।

जब आप किसी व्यावसायिक संगठन में काम करते हैं, तो वहाँ जोखिम उठाना जटिल विषय होता है। जो आपका नहीं है, उसपर जोखिम उठाते हुए आपको लापरवाह होने की छूट नहीं मिलती। यह दूसरे के धन का दाँव होता है। आपके पास संगठन को दाँव पर लगाने का कोई अधिकार नहीं होता है। साथ ही आपका यह अधिकार भी नहीं होता कि संगठन में दूसरों के लिए कोई बड़ी

संकटपूर्ण स्थिति खड़ी कर दें। यदि आप स्वयं को नेतृत्वकारी भूमिका में लाना चाहते हैं, तो जोखिम भी आपको स्वयं ही उठाना पड़ेगा। आप चाहे कितने भी सूझबूझ से जोखिम उठाएँ, लेकिन जोखिम तो जोखिम होता है। आप जोखिम के बारे में कोई निश्चित भविष्यवाणी भी नहीं कर सकते। इस तरह नेतृत्वकर्ता बनना स्वयं के भविष्य को दाँव पर लगाना ही होता है।

• **हिचकिचाहट के बिना गलती माननी पड़ती है**—आमतौर अधिकतर लोगों के लिए सबसे कठिन काम होता है—अपनी गलती स्वीकार करना। पकड़े जाने पर भी वे हर संभव कोशिश करते हैं कि उन्हें गलती न माननी पड़े। और जब कभी मजबूरी में गलती माननी पड़ जाती है, तो वे अपमान महसूस करते हैं। लेकिन सफल नेतृत्वकर्ता दूसरों द्वारा उँगली उठाए जाने से पहले ही अपनी गलती मान लेते हैं, और तत्काल उस गलती को सुधारने की दिशा में काम शुरू कर देते हैं। वैसे सफल नेतृत्वकर्ता गलतियाँ ही बहुत कम करते हैं, और उन्हें कभी-कभार ही खेद जताने की जरूरत होती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि वे नेतृत्व के निचले स्तरों पर अधिकांश गलतियाँ कर चुके होते हैं, और अपने वरिष्ठों से उसके लिए माफी भी माँग चुके होते हैं। यदि वे ऐसा नहीं करते होते, तो अपने वरिष्ठों का विश्वास भी हासिल नहीं कर पाते और फिर शीर्ष नेतृत्व तक तो पहुँच पाने की कोई संभावना ही नहीं बन पाती।

वैसे तो कोशिश यही होनी चाहिए कि गलती न हो, लेकिन जब हो जाए तो बिना किसी हिचकिचाहट के उसे स्वीकार करना चाहिए। क्योंकि जब आप अपनी गलती स्वीकार कर लेते हैं, अपने वरिष्ठ की विश्वसनीयता अर्जित कर सकते हैं। हाँ, एक ही गलती बार-बार करना उचित नहीं होता, क्योंकि इससे पता चलता है कि आपने अपनी पिछली गलती से सीखा नहीं। ऐसे में यदि बार-बार गलती मानने का नाटक करते हैं, तो वरिष्ठ अधिकारी उसे आपकी न दूर होनेवाली कमजोरी मान लेते हैं और आप पर विश्वास नहीं करते। और जो लोग गलती हो जाने के बाद भी अपने वरिष्ठों के सामने उसे झुठलाने की कोशिश करते हैं, उन्हें तो बहुत ही निम्न स्तर का माना जाता है। तो बेहिचक गलती मानना, आपके सीखने की निशानी होती है। यदि आप इसी तरह गलती को स्वीकार करते हुए वरिष्ठों के मार्गदर्शन में सीखते हुए आगे बढ़ते रहते हैं, तो आप सफल नेतृत्वकर्ता बनने की सीढ़ियाँ चढ़ रहे होते हैं।

• **अपेक्षाओं से अधिक करना पड़ता है**—जो लोग शीर्ष पर बैठे हुए हैं, उनसे अपेक्षाएँ भी अधिक की जाती हैं। लेकिन विडंबना यह है कि अधिकांश संगठनों में निचले स्तरों पर काम कर रहे लोगों से अपेक्षाकृत काफी कम अपेक्षा की जाती है या अकसर कोई अपेक्षा की ही नहीं जाती है। वैसे किसी भी संगठन की सफलता के लिए नीचे से ऊपर सभी स्तरों के लोगों के योगदान की आवश्यकता होती है। लेकिन सच भी यही है कि अपेक्षाओं के बावजूद अधिकांश लोग अपेक्षा से कम ही कोशिश करते हैं और ऐसे ही लोग पूरे पेशेवर जीवन में कभी भी पदोन्नत

नहीं किए जाते। यही कारण है कि जब आप अपेक्षा से अधिक काम करते हैं, तो आप भीड़ से अलग दिखने लगते हैं, और वरिष्ठों के पसंदीदा बन जाते हैं। आपको अपने ही कार्यालय में यह उदाहरण देखने को मिलता होगा कि जो चंद लोग संगठन की अपेक्षाओं से अधिक काम करते हैं, वरिष्ठ जन उन्हें ही अधिक काम देते हैं। क्योंकि उन्हें उन चंद लोगों पर ही भरोसा होता है। और फिर जब कभी अवसर आता है, उन्हीं अपेक्षा से अधिक काम करनेवालों को पहले से अधिक जिम्मेदारियों वाले पद सौंपे जाते हैं।

• **आगे बढ़कर सहायता करनी पड़ती है**—जब आप आगे बढ़कर दूसरों की सहायता करते हैं, तो उन्हें अमूल प्रसन्नता प्राप्त होती है, उन्हें महसूस होता है कि आपको उनकी परवाह है, और वे आपको अपना समझने लगते हैं, आपका दिल से सम्मान करने लग जाते हैं। यही होती है सफल लोगों की दूसरों का दिल जीतने की कला। याद रहे कि यह कला ऊपरी मन से नाटक की तरह न प्रदर्शित की जाए। जब तक दूसरों की सहायता करना आपका स्वाभाविक गुण न बन जाए, तब तक आपको इसका निरंतर अभ्यास करना होगा। अन्यथा आपकी सहायता दूसरों को दिल की गहराइयों तक प्रभावित नहीं कर पाएगी। हाँ, इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि आप अपने वरिष्ठ, समकक्ष या कनिष्ठ लोगों की सहायता कर रहे हैं, जब आप कार्य-समूह के किसी एक व्यक्ति की भी सहायता करते हैं, तो आप वास्तव में समूचे समूह की सहायता करते हैं और उसका प्रभाव समूह के अन्य सदस्यों पर भी पड़ता है।

• **दूसरों के काम भी करने पड़ते हैं**—जब कोई यह कहकर काम करने से मना कर दे कि यह मेरा काम नहीं है, तो इसका अर्थ यह होता है कि उस व्यक्ति विशेष में सामूहिक कार्य-भावना का विकास नहीं हुआ है; अर्थात् उसमें नेतृत्व के गुण नहीं हैं। किसी कनिष्ठ या समकक्ष द्वारा यह कहे जाने पर कि यह मेरा काम नहीं है, इससे बढ़कर हतोत्साहित करनेवाली बात कोई और नहीं होती, लेकिन सफल नेतृत्वकर्ता ऐसी हालत में भी नकारात्मक रुख नहीं अपनाते हैं। चूँकि नेतृत्वकर्ता को सबको साथ लेकर चलना पड़ता है, इसीलिए उस व्यक्ति को अपनी गलती पहचानने का समय देते हैं, और आवश्यकता पड़ने पर उसका काम भी स्वयं ही कर लेते हैं। जब कोई नेतृत्वकर्ता अपने साथियों के साथ ऐसा व्यवहार करता है, तो वह उसके साथ भी दुबारा यह कहने की गलती नहीं कर पाता कि यह मेरा काम नहीं है। वास्तव में सफल नेतृत्वकर्ता को उसका कोई साथी ऐसी बात कह ही नहीं सकता। हाँ, शुरुआती दौर में ऐसी स्थितियाँ जरूर आ सकती हैं। लेकिन सफल नेतृत्वकर्ता किसी को भी अपने प्रभाव के दायरे से बाहर नहीं रहने देता, हर हाल में सभी को अपना बना लेता है।

• **दूसरों के उत्तरदायित्वों को अपना बनाना पड़ता है**—यह जरूरी नहीं कि आपके साथ काम करनेवाला हर व्यक्ति हर समय अपने उत्तरदायित्व को निभा सके। लेकिन जब आप किसी संगठन के लिए काम कर रहे हैं और नेतृत्वकारी भूमिका में हैं, तो

आप यह नहीं कह सकते कि अपने साथियों के कारण आप अमुक कार्य को पूरा नहीं कर सके। संगठन का काम तो हर हाल में पूरा करना पड़ता है। स्पष्ट है कि फिर नेतृत्वकर्ता को संगठन के काम को पूरा करने के लिए दूसरों के उत्तरदायित्व को अपना बनाना पड़ता है। याद रहे, सफल नेतृत्वकर्ता केवल उन्हीं साथियों के उत्तरदायित्व को अपना बनाते हैं, जिनमें उन्हें सुधार की संभावना नजर आती है या जो लोग कोशिश करने के बावजूद अपने काम को पूरा नहीं कर पाते। लेकिन जब साथी बोझ बन जाते हैं, तो नेतृत्वकर्ता उनका साथ भी छोड़ देता है और उनकी जगह दूसरों को मौका दे देता है।

कार्य-योजना को लागू करेंगे आप?

अब तक आप अपने जीवन के मूल उद्देश्य की दिशा में सफलता-यात्रा की कार्य-योजना पूरी तरह तैयार कर चुके होंगे। लेकिन किसी कार्य की योजना बनाना और उसकी तैयारी करना काफी नहीं है। जब तक कि आप उन योजनाओं को लागू नहीं करते, उसका कोई नतीजा नहीं मिल सकेगा। तो सबसे बड़ा प्रश्न है कि आप वास्तव में अपनी कार्य-योजना को लागू करने के लिए तैयार हैं?

ध्यान रखें कि परिणाम-उन्मुख (रिजल्ट ओरिएंटेड) खिलाड़ी प्रतियोगिता में अपनी बारी आने के लिए बिल्कुल तैयार रहता है। जीतनेवाली टोली में वे लोग होते हैं, जो हमेशा कार्य-योजना को लागू करने के लिए तत्पर रहते हैं। चाहे वह खेल, व्यापार, नौकरशाही, राजनीति, समाजसेवा आदि कोई भी कार्यक्षेत्र क्यों न हो, सफलता अर्जित कर सकनेवाले कार्यसमूहों के सदस्य तय योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए आत्मविश्वास से भरे होते हैं और नेतृत्वकर्ता की हरी झंडी मिलते ही उसे जुनून के साथ पूरा करने में जुट जाते हैं। ऐसा नहीं है कि वे किसी विशेष कार्य की ही तैयारी करते रहते हैं, बल्कि वे हमेशा ही अपेक्षित सामर्थ्य, उत्तरदायित्व व विश्वसनीयता का प्रदर्शन करते रहते हैं। इसीलिए उन्हें किसी नई कार्य-योजना को लागू कर पाने में कुछ अधिक परेशानी नहीं होती है। वे जितनी कुशलतापूर्वक योजना तैयार करते हैं, उतनी तत्परता के साथ उसे भी करते हैं। और ऐसा करने में वे आनंदित महसूस करते हैं। इन्हें बोलचाल वाली अंग्रेजी में गो-टू-प्लेयर्स भी कहा जाता है।

• **हर कार्य-समूह में परिणाम-उन्मुख लोग होते हैं**—हर कोई परिणाम-उन्मुख लोगों की सराहना करता है, और जब भी कोई कठिन समय आता है, तो उनकी ओर बड़ी आशा से देखता है, केवल उनके नेतृत्वकर्ता ही नहीं, समकक्ष व अनुगामी भी। मेरी नजर में परिणाम-उन्मुख लोग वे हैं, जो लगभग हर प्रकार के कार्य कर सकते हैं और हर परिस्थिति में परिणाम देते हैं। परिणाम-उन्मुख लोग मुख्य रूप से निम्नलिखित कार्य करते हैं—

• **दबाव में काम को पूरा करते हैं**—कार्यालयों में विभिन्न प्रकार के लोग हुआ करते हैं और वे कंपनी के लिए काम करते हैं। इन लोगों को मुख्य रूप से चार श्रेणियों में बाँटा जाता है—1. कमी परिणाम न देनेवाले लोग, जो हानिकारक होते हैं; 2. कमी-कभार परिणाम देनेवाले लोग, जो औसत होते हैं; 3. सहज परिस्थितियों में हमेशा परिणाम देनेवाले लोग, जो मूल्यवान् होते हैं; और 4. हर परिस्थिति में परिणाम देनेवाले लोग, जो अनमोल माने जाते हैं। परिणाम-उन्मुख लोग वे हुआ करते हैं, जो कुछ भी हो, काम को पूरा करने के रास्ते ढूँढ़ ही निकालते हैं। उन्हें किसी परिचित परिवेश की भी कोई आवश्यकता नहीं होती, और न ही किसी प्रकार का दबाव उनके काम को प्रभावित कर पाता है। मानो वे तो हमेशा परिणाम देने के लिए के लिए ही बने हैं!

• **सीमित साधन होने पर भी काम पूरा करते हैं**—परिणाम-उन्मुख लोग कार्य करते समय सीमित साधनों को भी अपनी रुकावट नहीं बनने देते। ऐसे लोगों को जब एक बार यह बात समझ में आ जाती है कि अमुक काम करना आवश्यक है, तो चाहे जैसे भी हो, उसे करके ही दम लेते हैं, भले ही उसमें कोई मौद्रिक लाभ भी न मिले।

• **धीमे कार्य-संवेग में भी काम पूरा करते हैं**—परिणाम-उन्मुख लोगों को अपने कार्य-स्थल का धीमा कार्य-संवेग (स्लो वर्क मोमेंटम) भी प्रभावित नहीं कर पाता। वास्तव में कार्य-संवेग के आधार पर किसी भी कार्यस्थल के लोगों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—1. संवेगहर्ता (मोमेंटम किडनैपर), जो लोग नेतृत्वकर्ता या कंपनी के संवेग को कमजोर बना देते हैं। इन लोगों की प्रवृत्ति विनाशकारी होती है और ये लोग कंपनी में निचले स्तर के लगभग 10 प्रतिशत लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। सफल नेतृत्वकर्ता ऐसे लोगों को खोजकर नौकरी से बाहर करने में अधिक देर नहीं करते; 2. संवेगगृहीता (मोमेंटम रिसीवर): ऐसे लोग जैसी परिस्थितियाँ आती हैं, उन्हें वैसे ही स्वीकार कर लेते हैं, वे न तो संवेग का निर्माण करते हैं और न ही विनाश; वे तो बस संवेग के अनुसार चलायमान होते हैं; और ये लोग 80 प्रतिशत; और 3. संवेग निर्माता (मोमेंटम बिल्डर): ये लोग किसी भी कंपनी में 10 प्रतिशत नेतृत्वकारी भूमिकाओंवाले लोगों में से होते हैं, जो किसी कार्य को आगे बढ़ाकर संवेग का निर्माण करते हैं; ये लोग बाधाओं से उबरना जानते हैं; और जो लोग थके हुए या हतोत्साहित महसूस करते हैं, उनमें भी उत्साह व ऊर्जा का संचार करते हैं। इसीलिए ऐसे लोगों को कार्य-संवेग के धीमेपन से भी कोई असर नहीं होता, क्योंकि वे संवेग को बढ़ाना जानते हैं।

• **कार्य की अधिकता में काम पूरा करते हैं**—अच्छे कर्मचारी हमेशा अपने नेतृत्वकर्ता को सफल देखना चाहते हैं और काम की अधिकता होने के बाद भी बिना कोई बहाना बनाए उसे हर हाल में पूरा करते हैं। ऐसे ही परिणाम-उन्मुख लोगों पर नेतृत्वकर्ता पूरी तरह निर्भर करते हैं। इस तरह के लोगों की

सबसे बड़ी विशेषताएँ होती हैं—सुलभता (एक्सेसिबिलिटी) व उत्तरदायित्व (रिस्पांसिबिलिटी)। वास्तव में काम के भारी बोझ को वहन करने के लिए पद की नहीं, प्रवृत्ति की आवश्यकता होती है। यदि आपमें अपने नेतृत्वकर्ता के काम के बोझ को उठाने की इच्छाशक्ति (विल पॉवर) व क्षमता है, तो आवश्यकता पड़ने पर आप उसपर प्रभाव डाल सकते हैं।

• **नेतृत्वकर्ता की अनुपस्थिति में काम पूरा करते हैं**—किसी कंपनी में मध्यम पदानुक्रम (मिडिल हायरार्की) में नेतृत्व लेने व स्वयं की पहचान करवाने का सबसे बड़ा सुअवसर तभी मिल पाता है, जब नेतृत्वकर्ता अनुपस्थित हो। ऐसे अवसरों पर जब नेतृत्व की कमान सँभालनेवाला कोई न हो, तो कोई एक सुयोग्य व्यक्ति उस तात्कालिक रिक्तता (इमीडिएट वैकेंसी) को भर सकता है। वैसे यह भी सच है कि नेतृत्वकर्ता पहले से ही ऐसे व्यक्ति को जानते होते हैं कि उनकी अनुपस्थिति में कौन कमान सँभाल सकता है। लेकिन इसके लिए पहले से ही अपने नेतृत्वकर्ता को संपूर्ण सहयोग देने की तत्परता होनी चाहिए। ऐसे में जो कोई नेतृत्वकर्ता अपनी अनुपस्थिति में आपको अपने कामकाज की कमान सौंपता है, तो आपके पास यह अवसर होता है कि आप आगे बढ़कर उस जिम्मेदारी को सँभालें और अपने को सुयोग्य साबित करें। ऐसे में जब नेतृत्व का अभाव होता है, तो आपको पदोन्नति का लाभ मिलता है।

नेतृत्व-सीढ़ी चढ़ने को तैयार हैं आप?

अधिकतर लोग इस तथ्य को ठीक प्रकार से नहीं समझ पाते हैं कि नेतृत्व-सीढ़ी पर ऊपर चढ़ने का एकमात्र तरीका यही है कि आप अपने साथ काम कर रहे दूसरे लोगों की सफलता सुनिश्चित करें। विकासशील संगठन व कंपनियाँ हमेशा परिणाम-उन्मुख लोगों के लिए अगले स्तर की नेतृत्वकारी भूमिकाओं में लाने का रास्ता बनाती रहती हैं। आप भी वैसे व्यक्तियों में शामिल हो सकते हैं, लेकिन उसके लिए कंपनियाँ बहुत कुछ देखती हैं। क्या आपको पदोन्नत कर दिया जाए, तो आप उस पद की जिम्मेदारियाँ सँभाल पाने में सक्षम हैं? क्या आपने ऐसे काम किए हैं कि आपको नेतृत्व-सीढ़ी पर ऊपर की तरफ ठेला जा सके?

याद रहे कि इसका पैमाना यही है कि आप जिस भी स्तर पर काम कर रहे हैं, वहाँ पर आपका कार्य-प्रदर्शन कितना अच्छा है, आप उस पद की जिम्मेदारियाँ पूरा कर पाने में कितना सफल रहे हैं। आप चाहे जिस पद पर भी हैं और सफल हैं, तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि आपको अगले स्तर पर सफल होने का सुअवसर अवश्य ही प्रदान किया जाएगा। याद रहे, इसके लिए उतावलापन दिखाने की भी आवश्यकता नहीं है। यदि आपका प्रबंधन नेतृत्व (मैनेजमेंट लीडरशिप) पेशेवर है, तो आप निश्चित मानिए कि वह आपके हरेक क्रियाकलाप को बारीकी

से परख रहा है, और वह उचित अवसर पर आपको पहले से बड़ी जिम्मेदारी सौंपनेवाला है।

• **आगे बढ़ना है, तो नेतृत्व करना सीखें**—यदि आप वास्तव में सफल व्यक्ति बनने की कोशिश कर रहे हैं, तो आपको निम्नलिखित बातों को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए—

• **जहाँ हैं, वहीं से शुरू होती है नेतृत्व-यात्रा**—आपको अपनी नेतृत्व-यात्रा वहीं से शुरू करनी हैं, जहाँ आप अभी हैं, न कि जहाँ आपको पहुँचना है। इसीलिए आपको अपने वर्तमान कार्य व उत्तरदायित्व पर अपना पूरा ध्यान केंद्रित करना होगा, चाहे आप कोई स्वरोजगार कर रहे हैं या कहीं किसी की नौकरी कर रहे हैं। ध्यान रखें, जब आप अपने वर्तमान कार्य व उत्तरदायित्व को पूरा कर पाने में सफल रहेंगे, तभी आपके लिए सफलता के मार्ग का अगला द्वार खुल सकेगा।

• विडंबना यह है कि अधिकतर लोग अपनी वर्तमान परिस्थिति को ही अपनी सफलता की राह की बाधा समझ लेते हैं। ऐसे लोगों की आकांक्षाएँ तो इतनी बड़ी-बड़ी होती हैं, लेकिन वे उसके लिए आवश्यक संसाधन जुटाने के लिए परिश्रम नहीं करना चाहते। ऐसे लोग संसाधन के तात्कालिक अभाव के लिए अपने भाग्य को कोसते हैं, और अपने वर्तमान कार्य में पूरा ध्यान केंद्रित नहीं करते। नतीजा यह निकलता है कि वे अपने वर्तमान कार्य में भी सफल नहीं हो पाते और फिर बड़ी आकांक्षाओं के प्रति निराश हो जाते हैं। यदि आप किसी ऐसी मानसिक उलझन में फँसे हुए हैं, तो तत्काल उससे खुद को बाहर निकालें और उपलब्ध संसाधन से जो कुछ भी कर सकते हैं, जी-जान से करें। जब आप ऐसा करेंगे तो आपको निश्चित रूप से उस कार्य में सफलता मिलेगी और आगे का रास्ता भी खुल जाएगा।

• **भूमिकाएँ बदलती हैं, नेतृत्व की आधारभूत कुशलताएँ नहीं**—घबराइए मत, आपको जिस कार्य के लिए पदोन्नत किया जा रहा है, उसके लिए आप पूरी तरह से योग्य हैं। आपको पदोन्नति देनेवाले शीर्ष नेतृत्व ने आपकी संभावनाओं को परखने के बाद ही आपको यह अवसर प्रदान किया है, क्योंकि नेतृत्व की आधारभूत कुशलताएँ कभी नहीं बदलती हैं। हाँ, आपको अपनी सोच व दृष्टिकोण का दायरा बड़ा करना होगा और नए पद की आवश्यकताओं के अनुरूप कुछ नई कार्यक्षमताएँ भी विकसित करनी होंगी। शुरुआत में आपको नई चीज सीखने के लिए अतिरिक्त परिश्रम तो करना ही पड़ेगा, लेकिन ज्यों-ज्यों आप नए उत्तरदायित्व को पूरा करने लग जाएँगे, आपके लिए वह काम भी पहले के ही काम की तरह सहज लगने लगेगा।

• लेकिन अधिकांश लोग ऐसा नहीं कर पाते; वे न तो स्वयं की मानसिकता को बदल पाते हैं, और न ही अपनी क्षमता विस्तार ही। यही कारण है कि उच्च विद्यालय स्तर के खिलाड़ियों में बहुत कम खिलाड़ी विश्वविद्यालय स्तर तक जा पाते हैं, और फिर मुट्ठी भर खिलाड़ी ही व्यावसायिक स्तर पर पहुँच पाते हैं। स्पष्ट

है कि यदि आप अपने वर्तमान काम को सफलता के उच्चतम स्तर पर नहीं ले जाते, तब तक आप अगली प्रतिस्पर्धा के लिए स्वयं को तैयार नहीं कर पाते, और सीमित अवसर आपके हाथों से बाहर चले जाते हैं। इस तरह यदि आपको नेतृत्व के अगले स्तर पर पहुँचना है, तो आपको अपने वर्तमान कार्य को सर्वोच्च स्तर पर ले जाना पड़ेगा, क्योंकि पदोन्नति पानेवालों की संख्या बहुत कम होती है।

• **बड़ी जिम्मेदारियाँ तभी मिलेंगी, जब छोटी जिम्मेदारियाँ भली-भाँति निभाएँगे**—जब तक आप लिखना शुरू नहीं करते, तब तक आप लेखक कैसे बन सकते हैं? जब तक आप खेलना नहीं शुरू करते, तब तक खिलाड़ी कैसे बन सकते हैं? नेतृत्व क्षमता भी कुछ इसी प्रकार से विकसित होती है। आप छोटे से आरंभ करें और धीरे-धीरे उसे बढ़ाते जाएँ। यदि आपको पहले कभी भी नेतृत्व करने का अवसर नहीं मिला है, तो आपके लिए आवश्यक है कि आप किसी दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करने की कोशिश करें, और फिर उसकी संख्या बढ़ाते जाना चाहिए। इस तरह जब अधिक लोगों पर आपका प्रभाव बनेगा, तो आप फिर अपना कार्य-समूह बना सकेंगे। लेकिन आपको शुरुआत तो छोटे काम से करनी पड़ेगी।

• इतालवी रोमन कैथोलिक तपस्वी व उपदेशक पी.सी. के संत फ्रांसिस का प्रसिद्ध कथन है, जो आवश्यक है उसे करना आरंभ करें, फिर जो संभव है, उसे करें, और तब आप देखेंगे कि अचानक आप असंभव कार्य भी कर रहे हैं। स्पष्ट है कि सभी अच्छी नेतृत्व क्षमता वहीं से विकसित होनी शुरू होती है, जहाँ से आप काम करना शुरू करते हैं। जब आप आवश्यक काम करते हैं, तभी आपको वे कार्य भी दिखाई पड़ने लगते हैं, जो आप कर सकते हैं। इसी तरह जब आप अपनी क्षमता को विकसित करते चले जाते हैं, तो ऐसे-ऐसे कार्यों को करने लग जाते हैं, जिन्हें शुरू-शुरू में आप भी असंभव मानते थे। यही स्वाभाविक क्षमता विकास का क्रम है, जो लगातार अभ्यास के साथ निखरती व विकसित होती जाती है। इसी तरह जब आप किसी संगठन में छोटी-छोटी जिम्मेदारियों को भली-भाँति सँभालते हैं, तो आपको और भी बड़ी जिम्मेदारियाँ सौंपी जाती हैं।

• वर्तमान नेतृत्व-क्षमता ही अगले नेतृत्व-स्तर का आधार है—आप बहुत अच्छी तरह से जानते हैं कि आपके पहले के अनुभव के आधार पर ही कोई नई नौकरी दी जाती है। जब आप किसी नई नौकरी के लिए साक्षात्कार देने जाते हैं, तो वहाँ पर आपके पिछले कार्यों बारे में ही अधिक पूछताछ की जाती है, और उसके आधार पर आपके भविष्य की क्षमता-विकास की संभावनाओं व नेतृत्व-स्तर का आकलन किया जाता है। यदि आप अपने अब तक के पेशेवर जीवन में लगातार सफल देखे जाते हैं, तो साक्षात्कार-मंडल को यह अनुमान लगाने में देर नहीं लगती है कि आप अगली जिम्मेदारियों को भी ठीक प्रकार से निभाएँगे।

अब आप जीवन की सफलता-यात्रा शुरू करने के लिए पूरी तरह से तैयार हैं। स्वामी विवेकानंद के ये वचन हमेशा अपने मन में रखें—हर काम के लिए इन चरणों उपहास, विरोध व स्वीकृति से गुजरना पड़ता है। जो लोग अपने समय से आगे सोचते हैं, उन्हें गलत समझा जाना भी सुनिश्चित होता है। और कभी अपनी तुलना दूसरों से नहीं, बल्कि स्वयं से ही करें, क्योंकि आप आप हैं, कोई और नहीं। क्योंकि आपको अपने स्वयं को अपने स्वयं से आगे बढ़ाना है। अर्थात् अपने जीवन की महान् संभावनाओं को प्रकट करना है। अपनी स्वयं की अनंत संभावनाओं की निरंतर खोज ही सफलता-यात्रा का मूल्य उद्देश्य है। 'बृहदारण्यक उपनिषद्' की इस महान् घोषणा को अपना जीवन-मंत्र बना लें—अहम् ब्रह्मास्मि, अर्थात् मैं ब्रह्म हूँ, अनंत वास्तविकता (इनफिनिट रियलिटी) हूँ; फिर बड़ी-से-बड़ी बाधाएँ आपको सफल होने से रोक नहीं सकतीं।

❑❑❑